चन्दामामा
जुलाई १९८०

कैम्पा का आरेंज* स्वाद....
पीजिए, मज़ा ऐसा कि याद कीजिए
कैम्पा से ज़िंदगी में मौजबहार, इसमें अब आरेंज* स्वाद की हलचल जगाइए, कैम्पा पीजिए, पिलाइए. मौजमस्ती का रंग, मौजमस्ती का स्वाद—कैम्पा आरेंज* स्वाद. ज़िंदगी की प्यास अधूरी, कैम्पा आरेंज* स्वाद से कीजिए पूरी—इन सभी रंगारंग प्यारे लोगों की तरह...अभी.
*आर्टिफिशियल फ्लेवर
Campa
आरेंज स्वाद
OBM/4639
Campa
Campa

फ्लैश अपनाइये, मुस्कान फैलाइये!

ये हैं खूबसूरत मुस्कान के ताज़गीभरे राज़ :

फ्लैश की ताज़गी :
इसमें मिला हुआ एक खास नीला तत्व मुँह की दुर्गंध साफ करता है, और दाँतों की कीटाणुओं से रक्षा भी.

फ्लैश का आत्म-विश्वास :
क्योंकि आप जानते हैं, कि फ्लैश में आपके दाँतों, मसूढ़ों और सारे मुँह की देखभाल के सारे साधन मौजूद हैं.

फ्लैश का स्वाद :
म...म...मज़ेदार, यानी सनसनाती ताज़गी की ऐसी बहार, कि दिल बस करने को चाहे बार बार.

फ्लैश का कमाल-पूरे मुँह की देखभाल

फ्लैश
टूथपेस्ट

ताजगी भरे एक खास नीले तत्व सहित

everest/90/FL/163-hn

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनाम ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०
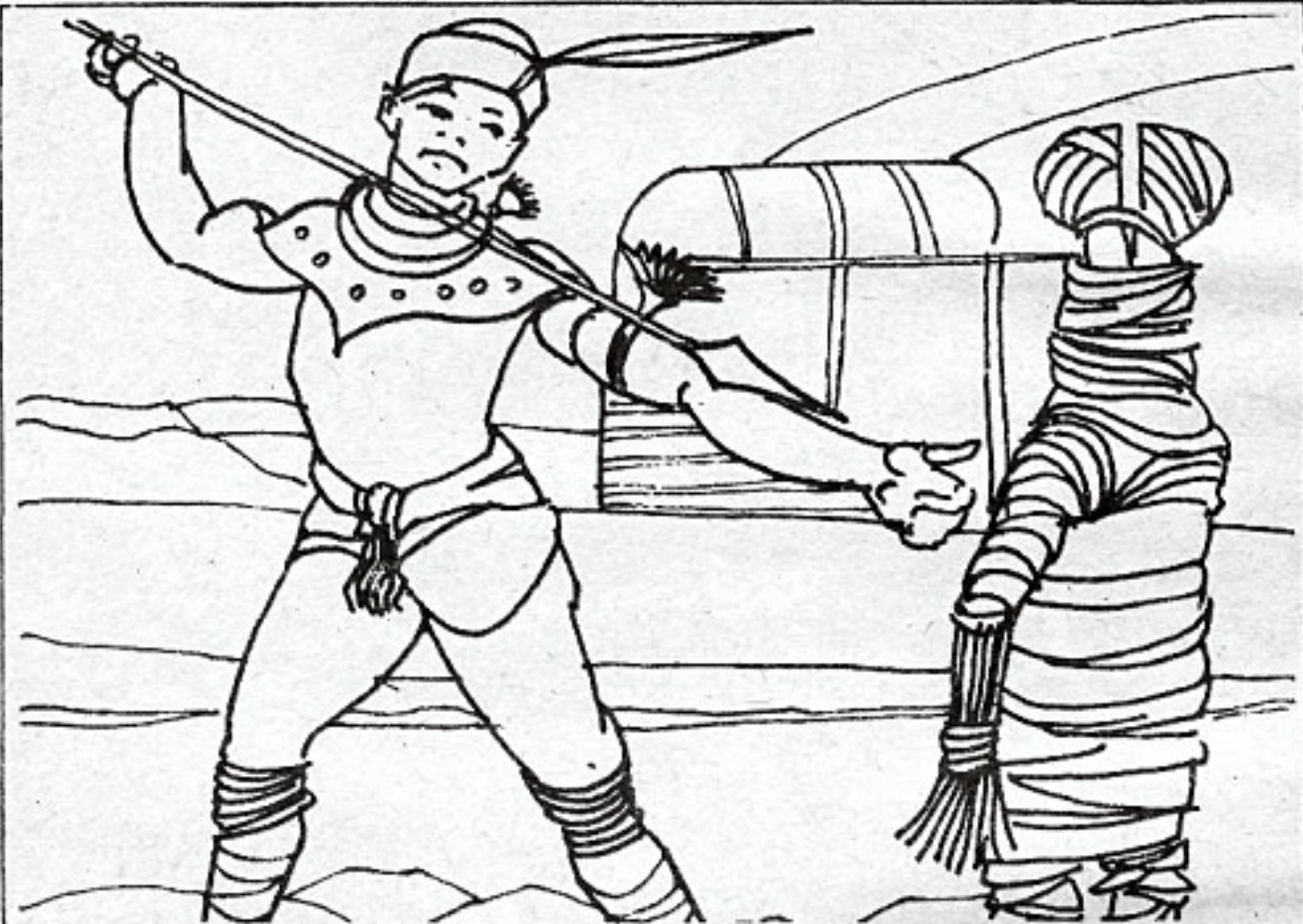
केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पते पर भेजिए P.B. No. 9928. COLABA. Bombay-400 005.

परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.................................... Age................

Address..

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

बिन्दुपूर्ण रेखा के साथ काटिये

CONTEST NO.15

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: 31-7-1980

Vision

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "वात्सल्य" है ।

"बेकार की चीज़ें" नामक कहानी में एक महान सामाजिक नीति वर्णित है । जो चीज़ें हमें आसानी से उपलब्ध हैं, उनका मूल्य हम समझ नहीं पाते हैं, साथ ही उनका मूल्य हम निर्द्धारित नहीं कर पाते हैं ।

अमर वाणी

परापवादे बधिरः, परच्छिद्रे ष्वलोचनः,
पंगुः कर्म स्वनार्येषु, दुस्संकल्पे ष्वचेतनः ।।

[जो व्यक्ति दूसरों की निंदा करने में बहरा, दूसरों के दोष ढूंढ़ने में अंधा, बुरे काम करने में लंगडा और बुरे विचार करने में मूर्ख बनते हैं, वे सत्पुरुष कहलाते हैं ।]

वर्ष : ३२ जुलाई १९८० अंक : ११

एक प्रति : १-५० : : वार्षिक चन्दा : १८-००
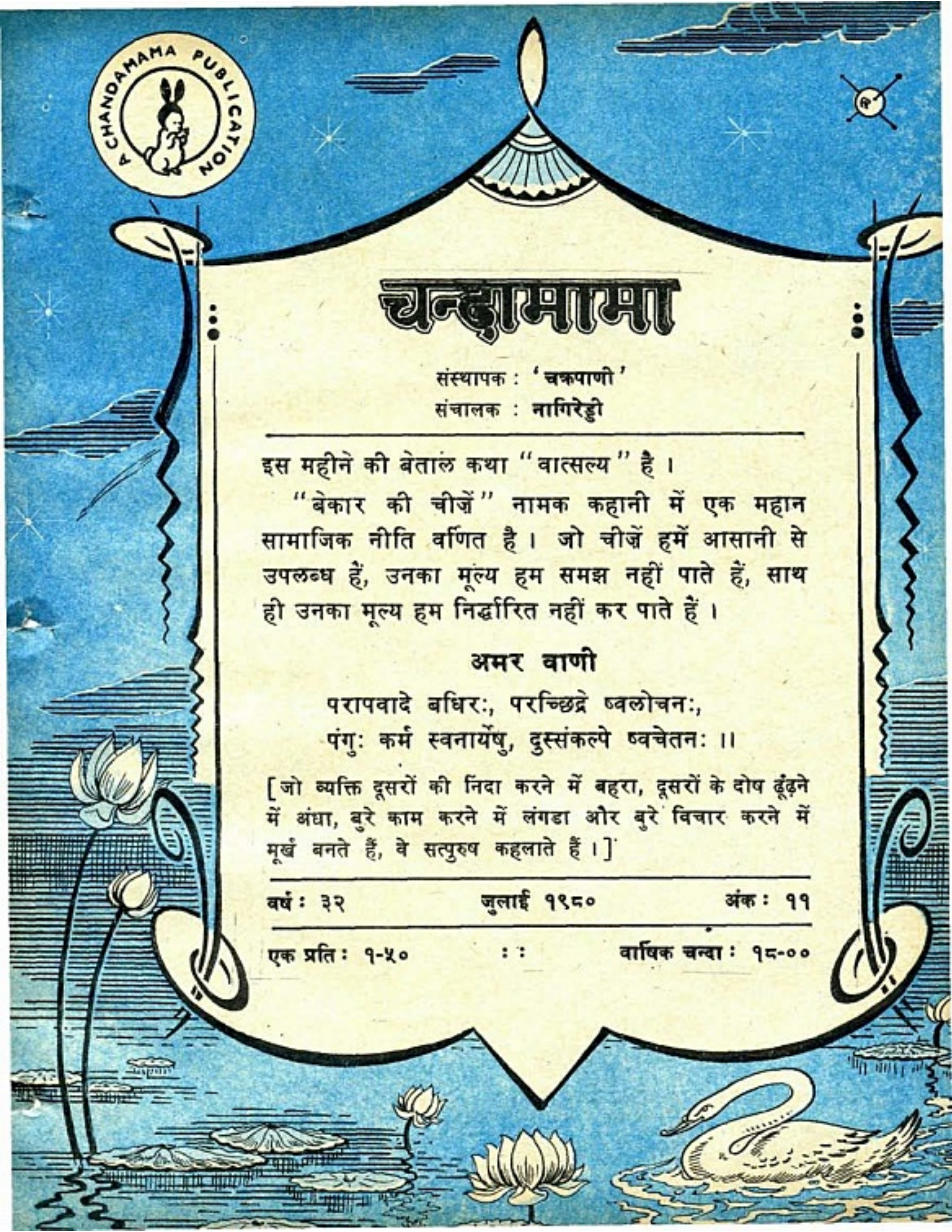
पो. दुर्गाप्रसाद, कविटि

प्रश्न : मन हमेशा भूत और भविष्य के बारे में सोचता है, उस वक़्त (वर्तमान में) होनेवाले के बारे में क्यों नहीं सोचता?

उत्तर : भूत और भविष्य को कोई भी समझ सकता है, मगर वर्तमान की व्याख्या करना कठिन है। संदर्भ के अनुसार उसका स्वरूप बदलता जाता है। "यह वर्ष" "यह दिन" (आज) "यह शताब्द" नामक शब्दों का हम जब प्रयोग करते हैं, तब हम उन्हें एक वर्ष, एक दिन और एक शताब्द को वर्तमान के रूप में ही लेते हैं। इसी प्रकार "आधुनिक युग में" जब कहा जाता है, तब वह युग न भूतकाल होता है और न भविष्यत्काल। इसलिए वह वर्तमान ही होता है।

मनोविज्ञान के आधार पर विचार करें तो हमें संदेह होता है कि क्या वर्तमान नामक कोई चीज़ भी है? प्रति क्षण वर्तमान से भूतकाल में जाता है। भविष्य से वर्तमान में आ जाता है। किसी क्षण को रोककर हम यह नहीं कह सकते कि "यही वर्तमान" है। इसलिए मन जब तक किसी पर लगा रहता है तब तक वह वर्तमान होता है। मन जिस किसी भी प्रकार का जो अनुभव करता है, उसे हम वर्तमान से संबंधित मान सकते हैं। अनुभव के पूर्ण हो जाने पर ही हम उसे भूतकाल से जोड़ सकते हैं–एक कहानी पढ़ते हैं या एक नाटक देखते हैं या एक गीत सुनते हैं।

मन के द्वारा पानेवाला यह अनुभव ज्ञानेंद्रिय और कर्मेंद्रियों से संबंधित होता है। इस अनुभव को भूत या भविष्य से प्राप्त करना संभव नहीं है। इसलिए हमारे सारे अनुभवों को वर्तमान से संबंधित मानना होगा। मन सदा अनुभव के बारे में ही विचार करता है, इसलिए जो अनुभव प्राप्त किया जा रहा है, उसकी प्राप्ति के समय उसके बारे में विचार करना संभव नहीं है। जैसे गीत में अगर कोई बात हमें अच्छी लगे, सिनेमा में कहीं अभिनय के बिगड़ने की हमारी अनुभूति हो, या किसी रचना में कोई शब्द श्लेषात्मक प्रतीत हो, तो यह बात हमें अनुभव के बाद ही मालूम हो जाती है। अब भविष्य के बारे में सोचना भूतकाल के बारे में सोचने के जैसा नहीं है, क्योंकि वह तो कल्पना पर आधारित होता है। वह कल्पना भी अपने पूर्वानुभवों पर आधारित होता है, अतः अनुभवों से विहीन विचार संभव नहीं है।

[८४]

बिल्ली की वज़ह से गीध के मर जाने की कहानी सुनाकर कौआ हिरण से बोला—"इसलिए जाति, वंश और स्वभाव से अपरिचित लोगों को हमें निकट आने नहीं देना चाहिए।"

ये बातें सुन सियार आग बबूला हो चिल्ला उठा—"अच्छा, यह बताओ, जब हिरण के साथ तुम्हारा परिचय हुआ, तब क्या वह तुम्हारी जाति, वंश और स्वभाव से परिचित था?" उसके और तुम्हारे बीच दिन ब दिन कैसे मैत्री बढ़ती जा रही है? इसी से तुम्हारी संकुचित मनोवृत्ति का पता चल जाता है। ऐसे ही लोगों के मन में यह बात सूझती है कि 'यह मेरी है और यह दूसरों की है।' जहाँ पंडित नहीं होते, वहाँ मूर्ख की भी प्रशंसा होती है। जहाँ बड़े वृक्ष नहीं होते, वहाँ एरंडी का पौधा ही महान वृक्ष कहलाता है। लेकिन जो महान होते हैं, उनकी दृष्टि में सारा संसार ही उनका है। याद रखो, जैसे मैं इस हिरण का दोस्त बना, वैसे ही तुम दोस्त बन गये हो।"

इस पर हिरण दोनों को शांत करते हुए बोला—"सुनो, तुम दोनों लड़ते क्यों हो? हम सब मिलकर आराम से अपने दिन बितायेंगे। जन्मतः कोई किसी का न दोस्त होता है और न दुश्मन!"

"अच्छी बात है! ऐसा ही सही!" कौआ बोला। उस दिन से लेकर वे तीनों एक साथ रहने लगे।

एक दिन सियार हिरण से एकांत में बोला—"दोस्त! इस जंगल के एक कोने में पकी फसल का खेत है। मैं तुम्हें वह खेत दिखा देता हूँ।" यों समझाकर

सियार हिरण को वहां पर ले गया। अपने जबड़ों से काटकर मुझे बचाओ।

उस दिन से हिरण रोज उस खेत में मित्र का मूल्य विपदा के समय, योद्धा की

फसल चरता था। खेत के मालिक ने कीमत लड़ाई में, विश्वासपात्र का मूल्य

हिरण को पकड़ने के लिए

के अपवित्र रगों से बुने इस जाल को अपने जबड़ों से कैसे काट सकता हूँ? सारे विश्व को प्रकाश और स्वच्छता प्रदान करनेवाले सूर्य भगवान को यह दिन अर्पित है। आज मैं तुम्हारी इच्छा की पूर्ति नहीं कर सकता, इसलिए तुम अन्यथा न मानो। कल सवेरे आकर तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करूँगा।" यों कहकर सियार एक झाड़ी के पीछे छुप गया। इस आशा से कि कब खेत का मालिक हिरण को मारेगा? और कब उसे मांस से चिपकी हिरण की हड्डियाँ मिल जायेंगी।

शाम तक जब हिरण न लौटा, तब कौए ने सर्वत्र उसे ढूँढ़ा और संध्या के समय उसे एक खेत में जाल में फंसे देखा।

कौए ने पूछा–"दोस्त, यह क्या है?"

"मैंने तुम्हारी सलाह न मानी, उसी का यह दुष्परिणाम है। हितैषी मित्र की विवेकपूर्ण सलाहों को जो नहीं सुनता, वह तक़लीफ़ों का शिकार हो जाता है। उसे देख उसके शत्रु खुश हो जाते हैं।" हिरण ने कौए से कहा।

कौए ने पूछा–"वह द्रोही कहाँ पर है?"

"मेरे मांस की प्रतीक्षा में झाड़ी के पीछे छिपा है।" हिरण ने कहा।

"मैंने पहले ही बताया था कि हमें यह सोचकर दुष्टों पर विश्वास नहीं करना चाहिए कि हम भले आदमी और सज्जन हैं। निर्दोष सदा दुष्टों के कारण ही कष्टों के शिकार हो जाते हैं। हमारे

सामने मीठी बातें करके परोक्ष में हमारे प्रयत्नों में विघ्न पैदा करनेवाले पयोमुख विषकुंभ होते हैं।" यों कहते कौए ने गहरी सांस ली, फिर बोला–"अरे दुष्ट, तुम ऐसा नीच कार्य करने पर कैसे तुल गये हो! तुम्हारे साथ सह जीवन करते तुम्हारी मीठी बातें सुनते जो मित्र यह विश्वास करते हैं कि बिपदा के वक़्त उनकी सहायता करेंगे, ऐसे मित्रों को ही दगा दोगे तो तुम्हारा यश कैसे बढ़ सकता है? हे भूमाता, तुम ऐसे विश्वासघातियों के बोझ को कैसे ढो पाती हो? दुष्ट के साथ मैत्री नहीं करनी चाहिए। वह ऐसे कोयले के समान होता है जो गरम होने पर हाथ जलाता है और बुझने के बाद भी हाथ को काला बना देता है। ऐसी हालत में सियार की निंदा करने से फ़ायदा क्या है? दुष्ट पहले हमारे पैरों पर गिरता है, फिर कान में कोई मीठी बात सुनाता है, अंत में हमें काट खाता है। उसकी जीभ पर शहद और उसके पेट में जहर होते हैं। दोस्त, सुनो! सवेरा होते ही किसान आएगा! मैं तो तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता। इसलिए किसान को दूर पर देखते ही चेतावनी के रूप में मैं चिल्लाऊँगा। तुम मृत प्राणी के समान जमीन पर गिर जाओ। मैं फिर जब चिल्लाऊँगा तब तुम उठकर भाग जाओ।"

सवेरे ही किसान लाठी के साथ आ पहुँचा। उसे दूर पर देखते ही कौआ चिल्ला उठा। हिरण ने जमीन पर गिरकर ऐसा अभिनय किया, मानो वह मर गया हो। किसान खुश होकर बोला–"ओह, तुम अपने आप मर गये हो? खूब!" यह कहते किसान जाल को लपेट रहा था, तब कौआ फिर चिल्ला उठा। हिरण झट से उठ खड़ा हुआ, बड़ी तेजी के साथ उस ओर भागा, जिस दिशा की झाड़ी में सियार छिपा बैठा था। किसान ने निराश हो सारी शक्ति लगाकर अपनी लाठी को झाड़ी की ओर फेंक दिया, उसकी चोट खाकर सियार मर गया।

[२]

[कुंडलिनी द्वीप के राजा चित्रसेन ने यश की कामना से जनता पर लगाये जानेवाले कर आधे घटाये, परिणाम स्वरूप थोड़े ही दिनों में ख़ज़ाना खाली हो गया। आख़िर सेनापति की सलाह पर दूसरे देशों से धन लूटकर लाने के वास्ते कुंडलिनी की सेनाएँ नावों पर रवाना हुईं, उसी समय दक्षिणी दिशा में एक धूमकेतु दिखाई दिया। बाद...]

कुंडलिनी राज्य के सैनिकों को लेकर रवाना होनेवाली नौकाएँ तट को छोड़ समुद्र के अंदर जाने लगीं। उस वक़्त समुद्र शांत था और हवा अनुकूल थी।

सैनिकों में उत्साह था, लेकिन सेनापति समरसेन नौका पर एक कोने में ऊँचे आसन पर बैठकर दक्षिण दिशा में चमकनेवाले धूमकेतु की ओर एकटक देखने लगा।

समरसेन यों धूमकेतु की ओर देख ही रहा था, तभी थोड़ी दूर पर घने बादल उमड़ पड़े और उन बादलों ने धूमकेतु को ढक लिया। चारों ओर घना अंधेरा छा गया। क्रमशः समुद्र में उफान होने लगा। साथ ही गरजने लगा। इसे देख सारे सैनिक भय कंपित हो उठे।

समरसेन निश्चेष्ट हो यों देख ही रहा था, तभी नौकाधिपति उसके पास आया

इसके बाद घंटा भर समय बीता, मगर वातावरण में कोई परिवर्तन न आया। समुद्र में ऊँची लहरें उठकर कल्लोल कर रही थीं। आसमान काले मेघों से गिरा हुआ था। इसके साथ भयंकर तूफान भी शुरू हो गया।

धीरे-धीरे सैनिक अपनी हिम्मत खो रहे थे। आंधी के थपेड़ों से सारी नौकाएँ छितरकर इधर-उधर बह गईं। इस हालत में सभी सैनिक लोग नौकाओं पर जो भी सहारा मिला, पकड़कर जान बचाने के हेतु जूझने लगे।

रात के बीतने के साथ आंधी भी बढ़ती गई। नाविकों के नियंत्रण से छूटकर कुछ नौकाएँ एक दूसरे से टकराकर तितर-बितर होने लगीं। समरसेन जिस नौका में यात्रा कर रहा था, वह अत्यंत मजबूती के साथ निर्मित थी। इस कारण वह अन्य नौकाओं के धक्कों का सामना करने के बावजूद भी डूबी नहीं, बल्कि सागर की लहरों पर तैरने लगी थीं।

समरसेन उस बीभत्स को देख विचलित हो गया। सूर्योदय के होने पर ही इस बात का समाचार मिल सकता है कि कितनी नौकाएँ डूब गई हैं और कितने सैनिक मर गये हैं। वह अपनी नौका में स्थित कुंडलिनी देवी की मूर्ति के सामन

और बोला—"महा सेनापतिजी, हमारे सैनिक भयकंपित होते जा रहे हैं। उनमें से कुछ लोग चिल्ला रहे हैं कि समुद्र के तट पर लौट जाना हितकर है।"

समरसेन अपनी जगह से उठा, एक बार आसमान की ओर, फिर उमड़नेवाले सागर की ओर देखा। इसके बाद नौकाधिपति की ओर मुड़कर बोला—"अगर कुंडलिनी देवी की कृपा रही तो शीघ्र ही सारी स्थिति हमारे अनुकूल हो जाएगी। आप अभी जाकर उन्हें समझाइये कि एक सेनापति के रूप में अनेक युद्धों में कुशलता प्राप्त समरसेन के नेतृत्व में रहनेवाले सैनिकों की कोई हानि न होगी।"

घुटने टककर भक्तिपूर्वक प्रार्थना करने लगा।

इसके काफी देर बाद सूर्योदय हुआ। अचानक शुरू हुई आंधी भी धीरे-धीरे थम गई। काले बादल छंट गये। नौका पर देवी की मूर्ति के सामने बैठे समरसेन को संबोधित कर नीचे से सैनिक कोलाहलपूर्वक कहने लगे–"महा सेनापतिजी, इस वक़्त समुद्र शांत है। इसलिए आप से निवेदन है कि आप कृपया नीचे आकर आगे के कार्यक्रम का आदेश दीजिए।"

समरसेन को कुछ ऐसा लगा कि एकदम उनके सर पर से भारी बोझ उतार दिया गया है। उसने देवी की मूर्ति के सामने से उठकर चारों ओर एक बार नज़र दौड़ाई। नौकाओं में से क़रीब-क़रीब आधी से ज़्यादा समुद्र में डूब गई हैं। बची-खुची सारी नौकाएँ दूर पर इधर-उधर समुद्र पर तिर रही हैं।

समरसेन ने समझ लिया कि सैनिकों में से बहुत-से लोग मर गये हैं। उसे लगा कि बची हुई नौकाओं को एक साथ इकट्ठा करना तत्काल का कर्तव्य होना चाहिए। उसने उसी वक़्त अपनी नौका को लंगर डलवाया। तब छोटी नावों में सैनिकों को भेजकर तितर-बितर हुए सारे जहाजों को अपने जहाज के पास ले आने का आदेश दिया। थोड़ी ही देर में सारे जहाज आकर सेनापति के जहाज के चारों तरफ़ पहुँच गये। सारे सैनिक बड़ी प्रसन्नतापूर्वक जहाजों पर लौटकर आये और खड़े हो अपने सेनापति के सामने विनयपूर्वक सर झुकाये।

उन खड़े हुए लोगों में प्रत्येक सैनिक रात को आंधी के आघात से नाना प्रकार की यातनाएँ झेलकर भाग्यवश जीवित था।

सैनिकों की हालत देखते ही समरसेन ने भली भांति भांप लिया कि हालत कैसी निराशजनक है। रात के अनुभव को देख सैनिक समुद्र के नाम से ही कैसे कांप उठते हैं। इसलिए और थोड़े समय तक

समुद्र पर समय बिताना उचित नहीं है। साथ ही उन्हें इस बात का पता नहीं चल रहा था कि समुद्र में क़रीब-क़रीब वे लोग आखिर किस प्रदेश में है। यों विचार करके समरसेन ने एक सैनिक को बुलायाँ, मस्तूल पर चढ़कर यह पता लगाने का आदेश दिया कि कहीं भूप्रदेश उनके नजदीक में है या नहीं?

दूसरे ही क्षण वह सैनिक मस्तूल के शिखर पर चढ़ गया। सब की नज़र उस पर केन्द्रित हो गई। सैनिक ने थोड़ी देर तक चारों तरफ़ दृष्टि दौड़ाकर देखा, तब कहा–"समीप में कहीं भूप्रदेश दिखाई नहीं देता, लेकिन मुझे ऐसा दिखाई देता है कि पूर्वी दिशा में दूर पर पक्षी उड़ रहे हैं।"

ये बातें सुनते ही समरसेन उत्साह में आकर चिल्ला उठा–"कुंडलिनी महादेवी की जय!" उसके साथ सारे सैनिक अपन सेनापति के स्वर में स्वर मिलाकर चिल्ला उठे "जय, कुंडलिनी महादेवी की!"

इसके बाद सेनापति के आदेशानुसार सारे जहाज पक्षियों के उड़नेवाली दिशा की ओर आगे बढ़े। थोड़ी ही देर में दुपहर हो गई, धीरे-धीरे सूर्य पश्चिम की ओर प्रयाण करने लगा। फिर भी देर तक जमीन का कहीं निशान तक दिखाई

न दिया, इस कारण फिर से सैनिकों में निराशा छा गई। इस बीच एक सैनिक बोला–"अरे, सूर्यास्त होने को है!" बाक़ी सैनिक यह सोचकर डरने लगे–"थोड़ी देर में अंधकार फैल जाएगा। इस महा समुद्र के किनारे रास्ता न पाकर हमें न मालूम और कैसे कैसे खतरों का सामना करना पड़ेगा!"

उसी समय मस्तूल पर बैठा सैनिक चिल्ला उठा–"लो, देखो भूप्रदेश! बहुत ही समीप में ही दिखाई दे रहा है!" इस पर सैनिकों के उत्साह की कोई सीमा न रही।

इसके बाद सारे जहाज जमीन की दिशा में तेजी के साथ आगे बढ़े। इतने में सूर्यास्त हो गया। थोड़ी देर मे सारे जहाज एक भूप्रदेश में पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर पता चला कि वह एक टापू है। जहाजों पर से उतरने को हर सैनिक का दिल उमड़ने लगा। पर समरसेन ने बड़े ही कठोर स्वर में आदेश दिया–"मेरी आज्ञा के बिना कोई भी व्यक्ति जहाज पर से न उतरे!"

वे लोग समुद्र के बीच में स्थित एक महा द्वीप में पहुँच गये थे। द्वीप से पर्वत-पंक्तियाँ समुद्र के भीतर घुस आई थीं। उस प्रदेश में घने जंगल दूर तक फैले हुए थे और उनके बीच घूमनेवाले विचित्र जानवर भयानक लग रहे थे। समरसेन ने सोचा कि ऐसे प्रदेश में पर्याप्त सावधानी के बिना जहाजों का लंगर डालना खतरे से खाली नहीं है।

इसके बाद समरसेन ने सैनिकों के दो भाग किये, उनमें से कुछ सैनिकों को छोटी नावों में टापू के तट पर भेजना उत्तम होगा! उसका उद्देश्य था कि जब वे लोग टापू के अंदर जाकर वहाँ की हालत जानकर लौट आयेंगे, तब बाक़ी लोगों का टापू के भीतर जाना हितकर होगा।

मगर सवाल यह था कि सबसे पहले टापू में जानेवाले समर्थ सैनिक कौन हैं?

दिखाई न दे रहे थे। फिर भी समरसेन चौकन्ने हो तलवार हाथ में ले आगे रहकर मार्ग दर्शन कर रहा था, वहाँ पर उन्हें आदमी भले ही दिखाई न दे, वे किसी पेड़ की ओट में रहकर उन पर तीर चला सकते हैं......

यों सोचते आगे चलनेवाले समरसेन को अचानक एक भयंकर गर्जन सुनाई दिया। तभी सैनिकों में से एक कांपते हुए बोला–"सेनापतिजी! न मालूम यह गर्जन किस जानवर का है! मगर यह बहुत ही विकृत और डरावना लगता है! ऐसा गर्जन तो मैंने आज तक कहीं नहीं सुना है।"

ऐसे नये प्रदेश में जाकर वहाँ का सारा हाल जानने के लिए साहस और पराक्रम ही पर्याप्त नहीं हैं, समयस्फूर्ति और युक्ति भी चाहिए!

यों विचार करने पर समरसेन को लगा कि उसका स्वयं जाना ही सब तरह से उत्तम होगा! तब अपने सैनिकों में से छे उत्तम अनुभवी योद्धाओं को साथ लेकर उस नये द्वीप के अंदर चल पड़ा। समरसेन और बाक़ी छे सैनिक एक छोटी नौका पर सवार हो थोड़ी ही देर में तट पर पहुँचे।

किनारे का प्रदेश निर्जन था। कहीं मनुष्यों के चलने-फिरने के निशान तक

बाक़ी सैनिक भी डरकर चारों ओर नजर दौड़ाते हुए कांपने लगे। समरसेन ने उन्हें हिम्मत बंधाई, आगे चलने लगा, तब बाक़ी सैनिकों ने उसका अनुसरण किया। थोड़ी देर बाद वे लोग घने पेड़ों के बीच पहुँचे। पेड़ों से थोड़ी ही दूर पर एक बड़ा तालाब था। उसके आगे एक भयंकर दृश्य को देख सब लोग निश्चेष्ट हो गये।

तालाब के किनारे दो विकृत जानवर भयंकर रूप से लड़ रहे थे। कुछ और जानवर दूर पर पेड़ों के नीचे खड़े हो उस लड़ाई को देख रहे थे। समीप में

CHITRA

स्थित पेड़ों की डालों पर मनुष्यों की आकृति में स्थित दो बड़े-बड़े नर वानर उस लड़ाई को देखते परस्पर बातचीत कर रहे थे। उनके हाथों में पत्थर से निर्मित हथियार थे।

समरसेन उनकी ओर सैनिकों की दृष्टि आकृष्ट करते बोला–"वास्तव में ये सब विचित्र जानवर हैं। उन पेड़ों पर दीखनेवाले प्राणी नर नहीं हैं, न वानर ही हैं। शिलायुग में निवास करनेवाले मानवों को हम देखते हैं। ये लड़नेवाले जानवर जो हैं, लगभग उसी जमाने के हो सकते हैं! याने क़रीब-क़रीब कई लाख वर्षों के पहले के हैं।"

सैनिकों की समझ में न आया कि वे अपने प्रधान सेनापति को क्या जवाब दे। वे बराबर सिर खपाकर सोचने लगे कि ऐसे डरावने द्वीप में लूटने के लिए कहीं धन हो सकता है?

सेनापति समरसेन के मन में भी कुछ ऐसा ही संदेह हुआ। वह तो कुंडलिनी राज्य के खजाने को भरने और दूसरे राज्यों को लूटने के लिए निकल पड़ा है। मगर समुद्र में आंधी में फंसकर वह इस भयंकर द्वीप में पहुँच गया है। अब क्या करना होगा? बिना धन-संपत्ति के वापस लौटने पर एक ओर राजा के सम्मुख उसका अपमान होगा, क्योंकि उसीने राजा को यह सलाह दी है और दूसरी ओर राज्य की हालत और बिगड़ जाएगी।

समरसेन यों सोच ही रहा था कि तालाब के पास जानवरों की लड़ाई और भयंकर हो उठी। उसके विकृत गर्जन को सुनकर भयभीत हो हाथियों के झुंड भागने लगे। उस समय उस झुंड से अलग हो ऐरावत जैसा एक बड़ा हाथी अंधा-धुंध दौड़ते समरसेन के सैनिक की दिशा में आने लगा।

समरसेन अपने सैनिकों को चेतावनी देते हुए समीप के वृक्ष पर चढ़ गया, इसके दूसरे ही क्षण दो सिंह भयंकर गर्जन करते हाथी पर हमला कर बैठे।

वात्सल्य

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मैं सोचता हूँ कि राजा लोग राजनीति के सामने और किसी भी नीति का पालन नहीं करते। मगर राजनैतिक दृष्टि से विषम स्थिति का सामना करनेवाले राजा भी वात्सल्य के गुलाम होते हैं, इसका उदाहरण रविवर्मा का व्यवहार ही है। मैं उनकी कहानी सुनाता हूँ। आप श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा: रविवर्मा बड़े शक्तिशाली थे। उन्होंने युद्ध में विजयशेखर नामक राजा को बड़ी आसानी से हराया और उनके राज्य पर अधिकार कर लिया। उस युद्ध में विजयशेखर वीरता पूर्वक

बेताल कथाएं

लड़ते अपने प्राण खो बैठे। यह खबर मिलते ही उनकी पत्नी जो अभी जच्चा थी, कलेजा फटने के कारण मर गई। रविवर्मा के कोई संतान न थी, इस कारण विजयशेखर के पुत्र का विजयवर्मा नामकरण करके अपने निजी पुत्र की भांति देखभाल करने लगे।

इसके थोड़े दिन बाद रविवर्मा के एक पुत्री हुई, फिर भी रविवर्मा के मन में विजयवर्मा के प्रति वात्सल्य जरा भी न घटा। कुछ लोगों ने सोचा था कि वह बालक अनाथ हो जाएगा, पर उनका विचार गलत साबित हुआ। रविवर्मा ने अपनी पुत्री के समान विजयवर्मा को भी लाड़-प्यार से पाल-पोसकर बड़ा किया।

रविवर्मा की पुत्री युक्त वयस्का हो गई। उसके स्वयंवर की घोषणा करते रविवर्मा ने ढिंढोरा पिटवाया कि अपने होनेवाले जामाता को आधा राज्य दे दूंगा।

यह बात सुनने पर विजयवर्मा के मन में किसी प्रकार का मानसिक क्लेश न हुआ, लेकिन नये नये सेनापति के पद पर नियुक्त हुए भूपति के मन को बड़ी ठेस पहुँची। उसने विजयवर्मा के साथ मैत्री बढ़ाई और उसके हितैषी के रूप में राजा के विरुद्ध शिकायतें करता रहा।

एक बार भूपति ने विजयवर्मा को छेड़ते हुए कहा–"चाहे जो हो, तुम राजा के पालतू पुत्र हो! अगर ये ही अपने

निजी पिता होते तो तुम्हें प्राप्त होनेवाले राज्य में से आधा राज्य क्या अपने दामाद को दे देते? वास्तव में यह राज्य तुम्हारे पिता का है। इस रूप में भी सारा राज्य तुम्हारा ही है। अगर तुम थोड़ी हिम्मत के साथ काम लोगे तो पूरा राज्य तुम्हारे हाथ लगेगा। इसके लिए आवश्यक सहायता में कर सकता हूँ।"

इस पर भूपति से विजयवर्मा ने पूछा– "अगर राजा को मालूम हो जाय कि हम उनके विरुद्ध षड़यंत्र रच रहे हैं तो क्या वे उस षड़यंत्र को विफल बनाने के साथ हम को मौत की सजा नहीं देंगे?"

"तुम्हें इस बात के वास्ते डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। हमारा षड़यंत्र राजा पर प्रकट हो जाने की जरा भी हमें शंका हुई तो दूसरे ही क्षण हम गुप्त मार्गों से अपने पड़ोसी राजा नरसिंह के यहाँ जायेंगे। उनके सहयोग से हम बड़ी सरलतापूर्वक राजमहल पर क़ब्ज़ा कर सकते हैं। तुम तो अंत:पुर के सारे रहस्य जानते हो न?" भूपति ने समझाया।

उस दिन शाम को राजा रविवर्मा उद्यान में टहल रहे थे। उस वक़्त उनका पालतू डाक कबूतर आकर उनके कंधे पर बैठ गया। उसके साथ जो पत्र था, उसमें यों लिखा गया था–"आज रात को राजा की हत्या करने का षड़यंत्र होनेवाला है। विजयवर्मा राज्य पर अधिकार करने के वास्ते भूपति के साथ मिलकर षड़यंत्र रच

रहा है। इसलिए आप सावधान रहिए!" राजा रविवर्मा उसी वक़्त अंत:पुर को लौट आये और पहरेदारों को चेतावनी दी। राजा की हत्या करने के लिए नियुक्त व्यक्ति पकड़ा गया। उसने बताया कि यह हत्या करने के लिए भूपति और विजयवर्मा ने उसे नियुक्त किया है।
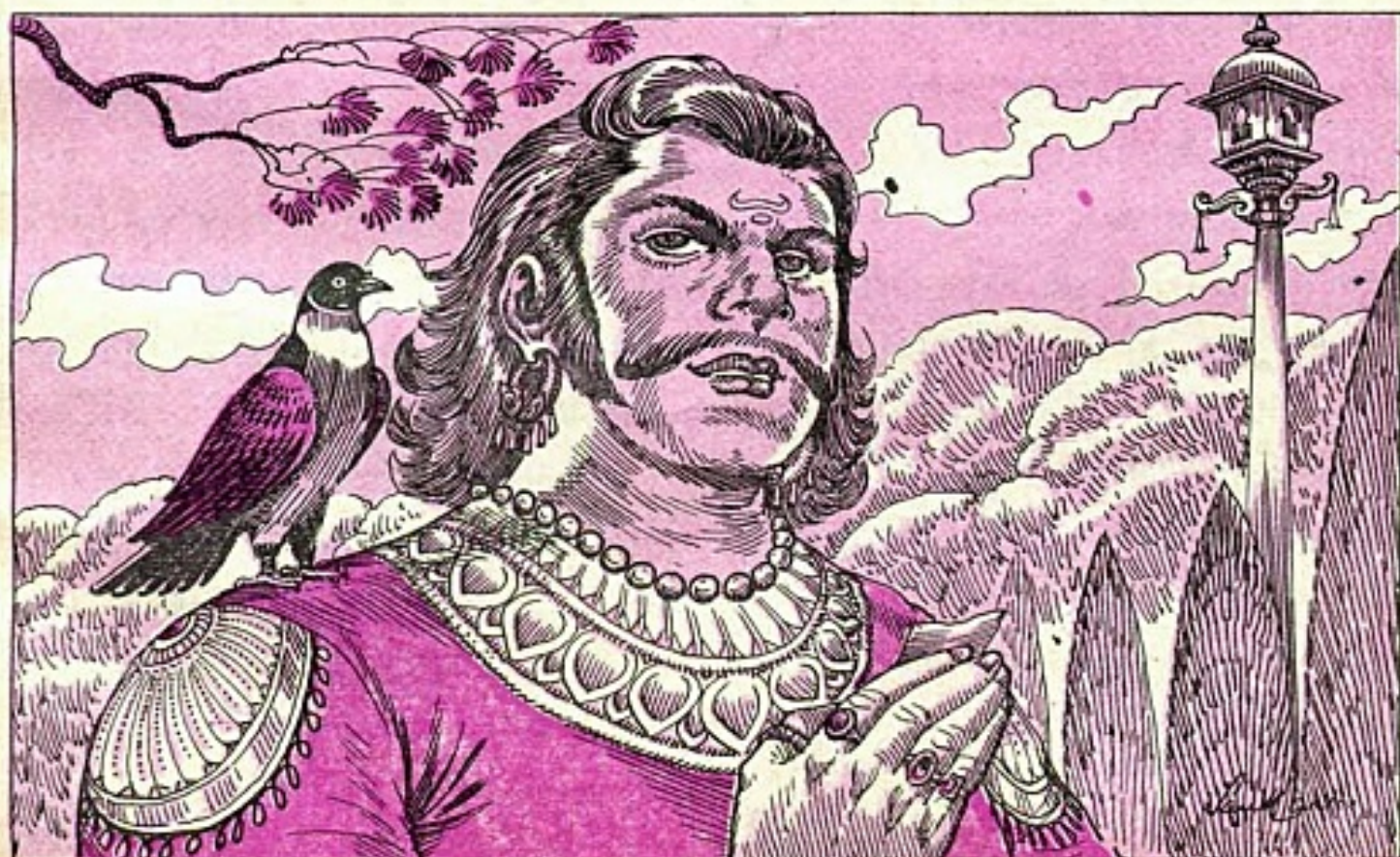
यह ख़बर तो मिल गई कि उस रात को भूपति विजयवर्मा के साथ था। मगर उन दोनों का पता राजमहल में न था। साथ ही इस बात के सबूत भी मिल गये कि वे दोनों गुप्त मार्ग से भाग गये हैं। उस सुरंग का दूसरा छोर जंगली प्रदेश में स्थित एक मंदिर की मूर्ति के पीछे है। मंदिर के चारों तरफ़ स्थित पेड़ों के पीछे कुछ सैनिकों को गुप्त रूप से पहरे पर रखा गया।

उसी मार्ग से होकर विजयवर्मा तथा सेनापति भूपति दोनों नरसिंह के राज्य में गये। भूपति ने नरसिंह को समझाकर कि विजयवर्मा अंत:पुर के विद्रोह में रहे तो नरसिंह का विशेष लाभ न होगा, उसे नरसिंह के द्वारा कारागार में बन्दी बनाया।

इसके बाद भूपति ने नरसिंह तथा पचास कुशल सैनिकों को साथ लाकर गुप्त मार्ग में प्रवेश कराया। अंत:पुर को यह ख़बर पहुँची कि उनमें विजयवर्मा नहीं है। फिर क्या था, सुरंग के दोनों तरफ़ के द्वार बंद किये गये। विद्रोही सब उसमें फंस गये।

इस बीच राजा रविवर्मा अपनी सेना के साथ राजा नरसिंह के राज्य पर हमला कर बैठा। विजयवर्मा को कारागार से मुक्त कराकर उसे नरसिंह के राज्य का राजा बनाया।

एक सप्ताह तक सुरंग में अन्न-जल के बिना तड़पनेवाले विद्रोही बड़ी आसानी से रविवर्मा के अधीन हो गये। भूपति और नरसिंह को फांसी की सजा दी गई। सैनिक अपने राज्य को लौट गये और

विजयवर्मा के अंगरक्षक दल में शामिल हो गये।

रविवर्मा ने अपनी पुत्री के विवाह के समय उसके पति को जहाँ आधा राज्य दिया, वहाँ पर शेष आधे राज्य को विजयवर्मा के राज्य में मिला दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, विद्रोहियों में भूपति भी एक था, उसे राजा रविवर्मा ने मृत्यु-दण्ड सुनाया। मगर दूसरे विद्रोही विजयवर्मा को दण्ड देने से दूर, उसे राजा क्यों बनाया? क्या यह राजनीति कहलाएगी? या केवल वात्सल्य की भावना? इस संदेह का समाधान जानकर भी जवाब न देंगे तो आप का सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"इसमें जरा भी संदेह नहीं है कि भूपति के द्वारा आयोजित विद्रोह को विफल बनाने में पूरी मदद देनेवाला व्यक्ति विजयवर्मा है। राजा के पास कबूतर के द्वारा चिट विजयवर्मा ने ही भेजा था। राजा का वध करनेवाले षड़यंत्र में अगर वह भागीदार होता तो यह काम वह बड़ी आसानी से जब भी कर सकता था। इसके वास्ते उसे किसी दूसरे व्यक्ति को नियुक्त करने की आवश्यकता न होती। सब से बढ़कर उपाय तो उसके भागने के लिए सुरंग मार्ग का उपयोग करना है। इससे स्पष्ट है कि इस मार्ग को भूपति को जताने, तद्वारा उसे शत्रु का पता लगाने के ख्याल से ही विजयवर्मा ने ऐसा किया था। क्योंकि विजयवर्मा नरसिंह के पास साधारण मार्ग पर ही जा सकता था। गुप्त मार्ग में जाने की उसे ज़रूरत क्या थी? ये सारी बातें रविवर्मा ने बड़ी आसानी से भांप ली होगी। फिर भी अगर कोई संदेह रहा तो नरसिंह के द्वारा उसे बन्दी बनाने से उसका निराकरण हो गया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
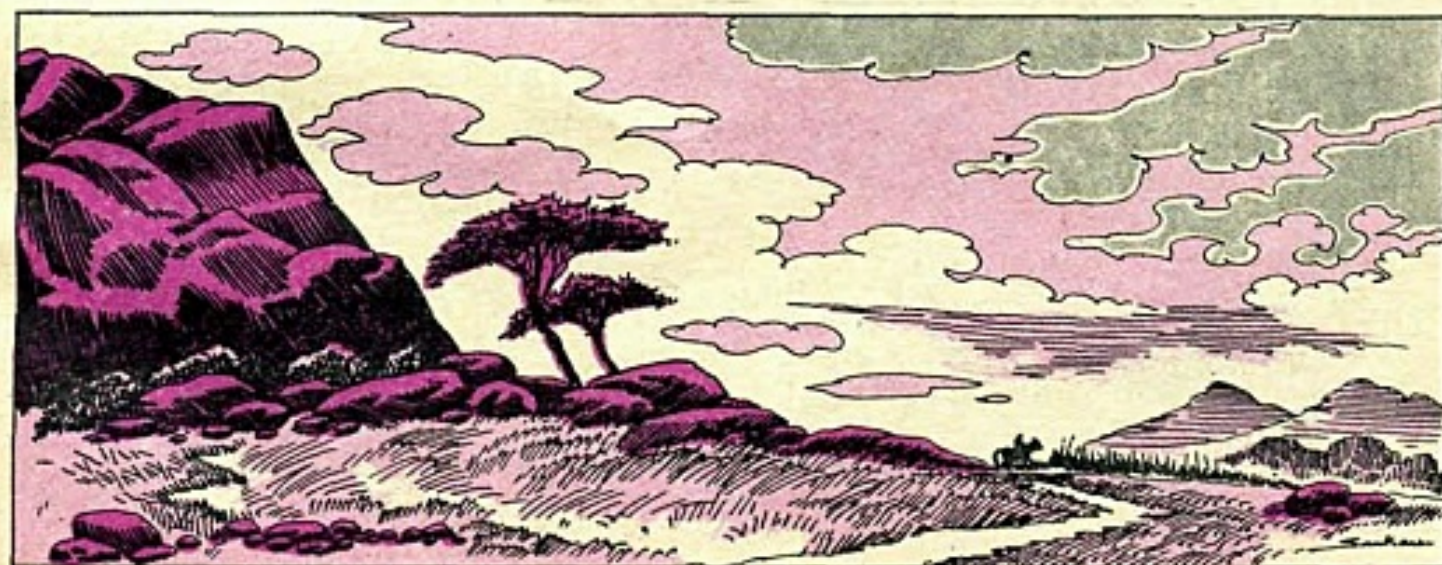
धोखे की सजा

रमणलाल स्वभाव से साधू प्रकृति का था। वह सारे गाँववालों की समय पर मदद पहुँचाता। इस कारण सब की प्रशंसा का पात्र भी बना। गाँववालों की मदद से थोड़ा-बहुत बचाकर शादी कर ली और छोटा-सा घर भी बना लिया।

एक दिन अचानक रमणलाल के घर में चोर घुस गये और उसकी सारी संपत्ति लूट ले गये। उस हालत में सब ने चन्दा देकर रमणलाल के घाटे की पूर्ति कर दी।

उसी गाँव में कनकदास नामक एक व्यापारी था। उसने अन्यायपूर्वक अपार धन कमाया। मगर रमणलाल को अनायास प्राप्त सहायता को देख वह ईर्ष्या से भर उठा। एक दिन रात को उसने अपनी सारी संपत्ति को गाँव के बाहर एक तालाब के पास गाड़ दिया। सवेरा होते ही चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगा कि रात को डाकुओं ने आकर उसके घर को लूट लिया है। चोरी का समाचार मिनटों में सारे गाँव में फैल गया, पर सब ने सिर्फ़ सहानुभूति जताई, लेकिन किसी ने भी उसकी सहायता नहीं की। क्योंकि उसने कभी किसी की अपनी ज़िंदगी भर में सहायता न की थी।

इस कारण कनकदास दंपति ने सोचा कि अमावास्या की रात को अपनी गाड़ी गई संपत्ति को खोद लाकर उस गाँव को छोड़ दूसरे गाँव में चले जावे। उधर गाँव का मुखिया कई दिनों से एक मंदिर बनाना चाहता था। उसने तालाब के पास मंदिर बनाने का अचानक निर्णय लिया। मंदिर के लिए जब नींव खोदी जा रही थी, तब कनकदास के द्वारा गाडी गई संपत्ति उसके हाथ लगी। लोगों ने कहा कि ईश्वर ने अपने मंदिर का खर्च आप ने ही उठाया है, पर कनकदास के धोखे के लिए अच्छी सजा मिल गई।
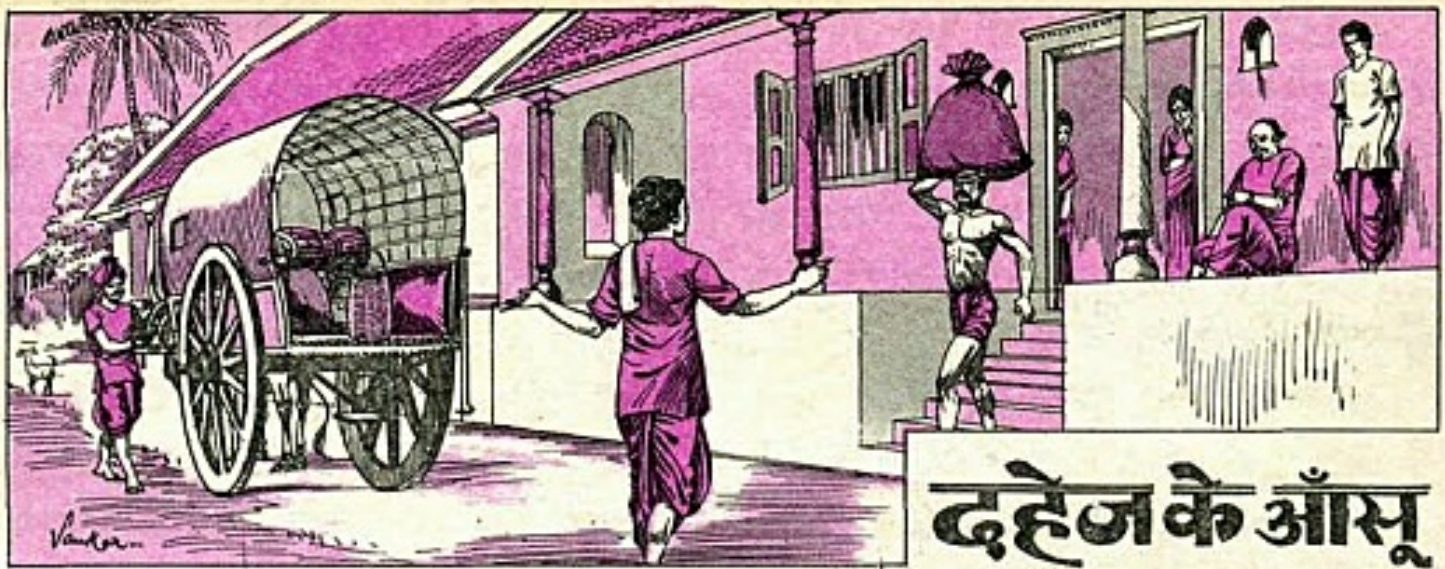
दहेज के आँसू

गंगाप्रसाद नामक व्यापारी के चार पुत्र थे। इस कारण सब कोई उसे भाग्यवान बताने लगे। खुद गंगाप्रसाद भी यही सोचा करता था।

एक धनी व्यक्ति ने गंगाप्रसाद के घर पहुँचकर कहा—"मैं आप के बड़े पुत्र के साथ अपनी कन्या का विवाह करना चाहता हूँ, पर मेरी शर्त यह है कि आप के पुत्र को मैं घर जमाई दामाद बनाना चाहता हूँ।"

धन के लोभ में पड़कर सब कुछ करने के लिए तैयार बैठे गंगाप्रसाद ने अपने समधी साहब से पच्चीस हज़ार रुपये लिये, लड़के की शादी करके उसके ससुर के घर भेज दिया।

इसी प्रकार बीस हज़ार रुपये दहेज़ वसूलकर दूसरे पुत्र की इच्छा के विरुद्ध उसकी भी शादी कर दी।

तीसरे पुत्र की शादी एक धनी परिवार में हुई। वहाँ से भी गंगाप्रसाद ने दहेज़ के पीछे बीस हज़ार ऐंठ लिये। मगर तीसरे पुत्र की पत्नी ने अपने पति को मनवाकर अपना घर अलग बसाया।

इस तरह एक-एक करके उसके सारे पुत्र उसके हाथ से निकलते जा रहे थे, फिर भी गंगाप्रसाद जरा भी चिंतित न हुआ। क्योंकि उसकी आशा के विपरीत उसे ज्यादा ही दहेज़ मिल गया था।

मगर चौथे ने अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध दहेज लेने से इनकार किया। गंगाप्रसाद ने उसे धन के महत्व के बारे में कई प्रकार से समझाया, पर उसने कान न दिया। इस पर गंगाप्रसाद ने दूसरे प्रकार से थोड़ा-बहुत ऐंठना चाहा, उसने अपने बेटे से कहा—"बेटा, तब तो हम दहेज़ न लेंगे, लेकिन सिर्फ़ उपहार लेंगे।"

विमला प्रभाकर

"दहेज़ या उपहार के रूप में आप कन्या के पिता से एक पैसा भी न लेंगे, मैं इस शर्त पर शादी कर सकता हूँ!" यों बताकर चौथे पुत्र ने अपनी पसंद की लड़की को चुना और अपने पिता के सामने ही फूल मालाएँ बदल लीं।

अपनी उपेक्षा देख गंगाप्रसाद गुस्से में आ गया और उसने चौथे पुत्र को उसकी पत्नी सहित घर से निकाल दिया।

कई साल बीत गये। गंगाप्रसाद बूढ़ा हो गया। उसकी पत्नी कभी की मर चुकी थी। पुत्र तो उससे दूर रहें। एकाकीपन की चिंता में बीमार होकर खाट पकड़ ली। अगर वेतन देकर सेवा के लिए किसी को नौकर रखना चाहे तो उसका डर था कि कहीं वह उसका गला दबाकर धन के साथ भाग जाए! वह यह सोचकर चिंता में पड़ गया कि उसे एक अनाथ की मौत मरनी है।

चौथे पुत्र को जब मालूम हुआ कि उसका पिता बीमार है, तब वह अपनी पत्नी को साथ ले पिता के पास पहुँचा। अपने पुत्र को देख गंगाप्रसाद की आँखों में आँसू आ गये। बेटे ने उसे सांत्वना दी। बहू ने एक माता की तरह गंगाप्रसाद की सेवा-टहल की। गंगाप्रसाद को लगा कि उसके प्राण लौट आये हैं। धीरे-धीरे उसकी तबीयत सुधरने लगी।

गंगाप्रसाद ने जब अपने दूसरे बेटों के बारे में पूछा तो चौथे ने यही जवाब दिया—"पिताजी, अब बड़े भाई लौटकर घर न आयेंगे। तुमने उनकी क़ीमत लगाकर उन्हें बेच डाला। अब वे तुम्हारे बेटे नहीं, दूसरे भाई तो अपनी नापसंद की पत्नी के साथ नरक यातनाएँ भोग रहा है। उसकी हालत बड़ी दयनीय है।"

ये बातें सुनकर गंगाप्रसाद का दुख उमड़ पड़ा और वह एक बच्चे की तरह रो पड़ा। वह अब अपने बेटों को फिर से खरीद नहीं सकता था। वह धन के पीछे बिक गया था। जो बिका न था, वही आखिर उसके हाथ लगा।
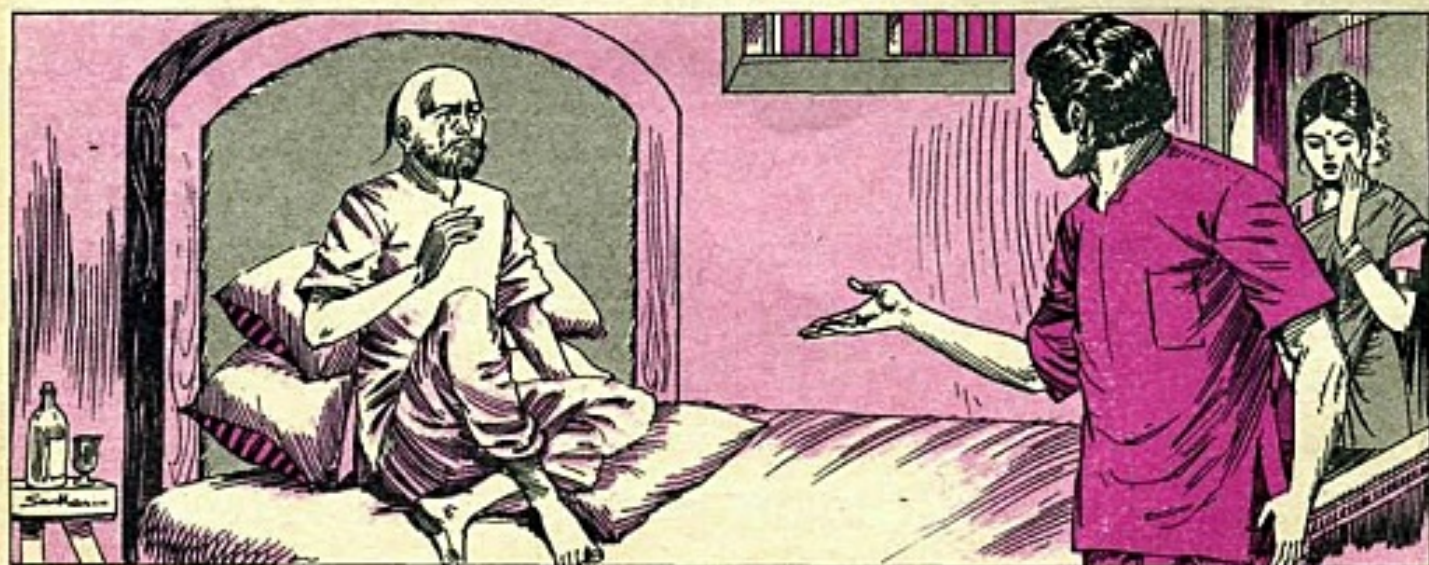
श्रवणानंद नामक एक धनवान था। वह अपने पुरखों की संपत्ति का अनुभव करते पुस्तक पठन में सुखपूर्वक अपने दिन बिताया करता था।

एक दिन उसके घर तीन रिश्तेदार आये। उनमें एक व्यापारी था, दूसरा गायक और तीसरा राज कर्मचारी। श्रवणानंद ने उन तीनों को बढ़िया आतिथ्य दिया और उनके पेशों के बारे में भी बड़ी ही सूझ-बूझ की बातें कीं।

इस पर तीनों ने श्रवणानंद से पूछा—"ऐसा लगता है कि आप दुनियादारी का अच्छा ज्ञान रखते हैं, क्या यह बता सकते हैं कि हम तीनों में कौन महान या बड़े हैं?"

"बड़प्पन में उनके, इनके का फरक नहीं होता! मेरे ख्याल से जो लोग ज़िंदगी भर खुश रह सकते हैं, वे सब बड़े हैं। हर एक की ज़िंदगी के लिए संतोष ही मुख्य है न?" श्रवणानंद ने कहा।

"ऐसा मत कहियेगा। कई लोगों के मन में व्यापार करने की इच्छा होगी, लेकिन क्या वे सब बड़े व्यापारी बन सकते हैं?" व्यापारी ने पूछा।

इसी प्रकार गायक और राजकर्मचारी ने अपनी-अपनी विशेषताओं के बारे में विस्तारपूर्वक श्रवणानंद को बताया।

उनकी बातें सुन श्रवणानंद ने हँसकर कहा—"तब तो यही कहना पड़ेगा कि आप लोगों में कोई बड़प्पन नहीं है। मैं आप लोगों के पेशों में आप लोगों से ज्यादा कुशलता दिखा सकता हूँ।"

श्रवणानंद के रिश्तेदारों को ये बातें चुनौतियों जैसी लगीं। उन लोगों ने बताया कि अगर वह अपनी बात को सच्ची साबित कर दे तो प्रत्येक व्यक्ति

उसे एक एक हज़ार सिक्के दे देंगे। श्रवणानंद ने इस स्पर्धा को स्वीकार कर लिया, अपने रिश्तेदारों के साथ राजधानी नगर में पहुँचकर सब से पहले व्यापारी के मकान में डेरा डाला।

व्यापारी के कई दूकानें थीं। उनमें सब्जी की दूकान भी थी। श्रवणानंद ने व्यापारी की दूकान से झाबे भर अच्छे किस्म के बैंगन लिये और अलग जा बैठा। वह ग्राहकों को बैंगनों का दाम सब से ज्यादा बताने लगा।

कुछ लोगों ने उनसे पूछा भी–"आप दूसरे दूकानदारों से दाम ज्यादा क्यों बताते हैं?" श्रवणानंद यही जवाब देता–"जैसा माल, वैसा दाम! और दूकानदारों के माल जैसा ही होता तो मैं ज्यादा दाम क्यों बताता? मेरा माल सब कोई खरीद नहीं सकते! धनगुप्त साहब जो हैं, हमेशा मेरे यहाँ से ही ख़रीद लेते हैं।"

वह बाजार अमीरों के व्यापार का था। थोड़ी-बहुत संपत्ति रखनेवालों ने श्रवणानंद के यहाँ से उसके बताये दाम पर बैंगन खरीदना अपनी हैसियत का प्रमाण माना। इस कारण श्रवणानंद का सारा माल बिक गया, उसे ज्यादा फ़ायदा हुआ।

दूसरे दिन श्रवणानंद आम जनता के बाजार में पहुँचा। वहाँ पर उसने माल पर कम फ़ायदा लेकर दूसरे दूकानदारों से सस्ते में सारा माल बेच डाला। बिक्री ज़्यादा हुई, इस वजह से फ़ायदा भी ज्यादा हुआ।

"तुम्हारी अक़्ल एक हज़ार सिक्कों के बराबर है।" यों उसकी तारीफ़ करके उसके रिश्तेदार व्यापारी ने श्रवणानंद को एक हज़ार सिक्के दे दिये।

इसके बाद श्रवणानंद ने वहाँ से अपना मुकाम गायक के घर के लिए बदल डाला। वहाँ पर वह रोज गायक के यहाँ से संगीत सीखते रोज शाम को कहीं हो आता था।

एक दिन वह एक हिरण को ले आया, गायक से बोला—"सुनो भाई, हम दोनों के बीच अगर संगीत की स्पर्धा होगी तो विजेता का नाम यह हिरण बता देगा!"

जब दोनों की संगीत-स्पर्धा की बात इधर-उधर फैल गई, तब चतुर्दिक के बहुत सारे लोग वहाँ पर इकट्ठे हो गये। पहले गायक ने अपना मधुर संगीत सुनाकर सबकी प्रशंसा पा ली।

फिर श्रवणानंद ने एक विरह गीत सुनाया। वह गीत एक प्रियतम अपनी प्रेयसी रानी के वास्ते गाता है। उसका गीत वैसे कोई ज्यादा ख़राब न था। मगर ज्यों ही उसने गीत गाना शुरू किया, त्यों ही हिरण आकर उसके सामने खड़ा हो गया। उसके गीत के समाप्त होने तक सुनता रहा, फिर वहाँ से हट गया।

श्रोता और गायक भी चकित रह गये। सब ने श्रवणानंद की तारीफ़ की। क्या गीत के द्वारा जानवर को आकृष्ट करना मामूली बात है?

गायक ने श्रवणानंद को एक हज़ार सिक्के सौंपते हुए पूछा—"हिरण को आप ने अपने गीत द्वारा कैसे आकृष्ट किया?"

"इसमें कोई बड़ी विशेषता नहीं है। मैंने इस तरह आलाप किया, जिससे हिरण भी समझ सके। पहले ही मैंने उसे इस

प्रकार का प्रशिक्षण दिया। उसका नाम मैंने रानी रखा है, वह अपना नाम पुकारते सुनकर चली आई।" श्रवणानंद ने समझाया।

इसके बाद श्रवणानंद सीधे राजकर्मचारी के घर गया और बोला—"मैं आप को राजा के द्वारा अच्छा पुरस्कार दिला सकता हूँ।"

यह बात सुनने पर राजकर्मचारी को गुस्सा भी आ गया।

श्रवणानंद ने एक रत्न ले जाकर उपहार के रूप में मंत्री को दे दिया।

मंत्री ने खुश होकर पूछा—"आप मुझसे कैसी सहायता चाहते हैं?"

"मुझे आध घड़ी के लिए राजा के दर्शन कराइये।" श्रवणानंद ने कहा।

मंत्री ने श्रवणानंद को दूसरे दिन दरबार में आने को कहा।

श्रवणानंद मंत्री के यहाँ से विदा लेकर एक प्रसिद्ध कवि के पास पहुँचा। उसे एक स्वर्ण मुद्रा देकर राजा की प्रशंसा में एक कविता लिखवाकर ले लिया।

दूसरे दिन वह राजदरबार में गया। राजा को नमस्कार करके वह कविता सुनाई।

राजा ने प्रसन्न होकर पूछा—"यह कविता किसने लिखी है?"

श्रवणानंद ने कहा—"महाराज, मैं नहीं जानता कि यह कविता करनेवाला कवि कौन है? मगर यह बात सत्य है कि मेरा एक रिश्तेदार सवेरे उठते ही यह कविता पढ़कर ही अपने दूसरे काम शुरू करता है। यह कविता सुनने के बाद ही मेरे मन में आप के दर्शन करने की प्रबल इच्छा पैदा हो गई। अब मेरी इच्छा सफल हुई।"

राजा को जब मालूम हुआ कि श्रवणानंद का रिश्तेदार उनके दरबार में काम करता है, तब राजा ने उसी वक़्त उसकी तनख्वाह बढ़ाने का आदेश दिया।

इसके बाद तीनों रिश्तेदारों ने श्रवणानंद से कहा—"तुम्हारे भीतर बड़ी अच्छी प्रतिभा है, फिर भी तुम गाँव के एक कोने में क्यों पड़े रहते हो? राजधानी में चले आओ। यहाँ पर तुम्हारी अक़्लमंदी का उचित आदर होगा।"

श्रवणानंद ने हँसकर कहा—"मेरी ये विजय जो हैं, क्षणिक हैं। आप लोगों जैसे अपने अपने पेशों में डटे रहकर यश प्राप्त करना कोई आसान बात नहीं है। मैं आप लोगों से सचमुच बड़ा आदमी नहीं बन सकता। लेकिन मैं वास्तव में ज्ञान का संपादन करते अपने जीवन को प्रसन्नतापूर्वक चलाना चाहता हूँ। यह भी और कहीं नहीं, अपने ही गाँव में।"

श्रवणानंद की विनयशीलता देख सब लोग चकित रह गये।

[२]

इन्द्र के द्वारा किये गये विशिष्ट कार्यों में वृत्र का संहार भी एक है। ऋग्वेद में ७० बार इन्द्र को "वृत्रहन" बताया गया है। वास्तव में वृत्रहनन में इन्द्र के साथ अग्नि और मरुतों का भी थोड़ा-बहुत हाथ रहा है। इन्द्र ने वृत्र के साथ उरण, विश्वरूप, अर्बुद इत्यादि राक्षसों का भी वध किया है। इस तरह इंद्र ने जब कभी राक्षसों का वध किया है, तब सोमरस को उनसे प्राप्त किया है।

कहा जाता है कि इन्द्र ने पर्वतों के कंपन को रोका है (पुराणों में बताया गया है कि इन्द्र ने पर्वतों के पंखों को काट डाला है।), पृथ्वी तथा आकाश को अलग करके खड़ा किया है। किसी राक्षस ने इन दोनों को एक किया तो उस राक्षस का वध करके इन्द्र ने उन्हें अलग किया है।

आर्यों को जब कभी अपने शत्रुओं के साथ सामना करना पड़ा, तब उन लोगों ने इन्द्र का स्मरण किया है। उन्होंने "काले" लोगों को पराजित किया है। ५० हज़ार काले लोगों को मार भगाया और उनके नगरों को समूल नष्ट किया। साथ ही दस्युओं को आर्यों के दास बनाये; आर्यों को जमीन भी दी। सप्त सिंधु देश में दस्युओं के आयुधों को आर्यों पर प्रयोग होने से बचाया।

अपने प्रति विश्वास रखनेवालों के साथ इन्द्र बड़े ही दयालु थे। उनकी मदद भी करते थे। उनकी आराधना करनेवालों के लिए तो वे मित्र थे, भाई थे, पिता थे। कुशिक वंश के प्रति उनके मन में विशेष प्रेम था। एक स्थान पर इन्द्र को कौशिक भी बताया गया है। वे समस्त प्रकार की

रहा था, तब इन्द्र ने दखल देकर सूर्य के रथ के पहियों में से एक को निकाल दिया। इसीलिए शायद कहा जाता है कि सूर्य के रथ के लिए एक ही पहिया है।

एक बार पणि नामक जाति के लोभियों ने यज्ञ में बलि देने के लिए गायें नहीं दीं। उन लोगों ने गायों को कहीं गुफा में छिपा दिया। उस वक़्त इन्द्र की दूत सरमा उनकी खोज में गयी और इन्द्र के वास्ते गायों की माँग की। इस पर पणियों ने सरमा का मजाक उड़ाया, तब इन्द्र ने उन्हें हराकर गायें ले लीं।

अनेक संदर्भों में बताया गया है कि इन्द्र ने दासों तथा दस्युओं को हराया है। ये लोग मानव थे। वे लोग चपटी नाकवाले काले वर्ण के थे। इन्द्र ने कुछ विशिष्ट लोगों की भी मदद की है। इस प्रकार इन्द्र के द्वारा सहायता प्राप्त लोगों में से दिवोदास अतिथिग्य भी एक हैं। इनका पुत्र एक प्रसिद्ध राजा सुदास है। दिवोदास का शत्रु शंबर दास वंशी था। इन्द्र ने दिवोदास की मदद करने के विचार से शंबर का वध किया है।

नमुचि एक असुर था। वैदिक साहित्य में अनेक स्थानों पर इसका उल्लेख हुआ है। कहा जाता है कि इन्द्र ने उसका सर मरोडकर मार डाला है या पानी के फेन

संपदाओं के मूलभूत व्यक्ति थे। उनके युद्धों को "गविष्टि" (गायों की कामना) बताया गया है। वे दान के रूप में अकसर गाय ही दिया करते थे। ऋग्वेद में वर्णित "मघवु" (संपूर्ण रूप से देनेवाले) इन्द्र ही थे। वे ही "वसुमति" (संपत्ति के नाथ) भी थे।

इन्द्र से संबंधित अनेक वीरतापूर्ण कार्य वर्णित हैं। उन्होंने उषा के शकट को तोड़ डाला है। वाहनों का वध किया है। फिर क्या था, उषा डरकर भाग गई।

एक बार सूर्य के रथ तथा एतश नामक घोड़े के द्वारा खींचे जानेवाले रथ के बीच होड़ लगी। सूर्य का रथ जब आगे जा

के द्वारा संहार किया है। (इन्द्र के द्वारा राक्षसों को समुद्र के फेन से मार डालने की बात वृत्र के विषय में भी कही गई है) ऋग्वेद के दसवें मण्डल में बताया गया है कि इन्द्र ने नमुचि के सामने सोमरस का पान किया था, उस वक़्त वे बीमार हो गये, तब अश्विनी देवताओं ने सरस्वती चिकित्सा करके उनकी बीमारी को दूर किया था।

यह भी कहा जाता है कि इन्द्र ने यदु और तुर्वश को नदियों का पार कराया था, यह क़रीब वास्तविक इतिहास से संबंधित अंश प्रतीत होता है। (पुरातत्व की खोजों के द्वारा यह साबित हुआ है कि यादव अनेक शाखाओं में बंटकर भारत के कई प्रदेशों में फैल गये और उन लोगों ने वहाँ के प्रदेशों को अपना स्थिर निवास बनाया है।) आर्यों के संचार जीवन में इन्द्र का हाथ रहा है, यह बात इस घटना के द्वारा साबित होती है।

एक कहानी के द्वारा हमें यह मालूम होता है कि इन्द्र और सुश्रवसु ने मिलकर बीस जंगली जातियों तथा साठ हज़ार निन्यानवें जंगली योद्धाओं का नाश किया है। इसी प्रकार सुदास के सारे युद्ध ऐतिहासिक ही मालूम होते हैं। दसराज्ञ नामक युद्ध सुदास ने दस राजाओं के साथ मिलकर किया था। उसमें इंद्र ने सुदास की मदद पहुँचाई थी। उनकी सहायता करने के लिए इन्द्र को वसिष्ठ,

तृत्स आदि महर्षियों ने प्रेरणा दी थी। इस पर इन्द्र ने सुदास के शत्रुओं को परुष्नी नदी में फेंक दिया था।

वैदिक कालीन इन्द्र नैतिक दृष्टि से या महत्व की दृष्टि से भी वरुण की समता नहीं कर सकते। फिर भी वरुण के अधिकांश गुण इन्द्र में भी बताये गये हैं। गौतम की पत्नी अहल्या और इन्द्र से संबंधित कहानी वैदिक काल की है, पुराणों की कल्पना नहीं।

कुछ पंडितों का कहना है कि वरुण इन्द्र से भी प्राचीन काल के हैं। ऋग्वेद काल के विकास के साथ वरुण का उल्लेख कम होता गया और इन्द्र का उल्लेख मात्र बच रहा।

फारसियों का धर्म ग्रंथ 'अवेस्ता' में इन्द्र का उल्लेख हुआ है, लेकिन उनकी प्रशंसा नहीं हुई है। उनके कथनानुसार इन्द्र राक्षस हैं। इसी प्रकार अवेस्ता में "देव" शब्द के प्रति कोई आदर भाव नहीं है। उस ग्रंथ में "असुर" शब्द के प्रति आदर व्यक्त हुआ है। वेदों में वर्णित कई शब्द अवेस्ता में मिलते हैं। इससे हम यह अनुमान कर सकते हैं कि एक जमाने में वेदों तथा अवेस्ता की संस्कृति एक ही रही होगी। वेदों में प्रयुक्त 'असुर' शब्द एक समय में आदर सूचक था, इससे भी यह बात स्पष्ट हो जाती है। लेकिन एक संदर्भ में दोनों के बीच वैषम्य उत्पन्न हुआ है। कुछ लोगों का कहना है कि दस राजाओं के (दशराज्ञ) युद्ध के समय से ही यह वैषम्य शुरू हुआ है।

पुराण काल के इन्द्र के साथ वैदिक कालीन इन्द्र की तुलना करने पर वे महान योद्धा नहीं लगते। यज्ञ काल के समाप्त होने पर तपस्या को महत्व मिला, तब हर राक्षस ने तपस्या करके ब्रह्मा या शिवजी के द्वारा वर प्राप्त करके इन्द्र को बड़ी आसानी से हराया। उस हालत में इन्द्र ने विष्णु के साथ दशरथ जैसे मानवों की मदद भी माँगी थी।

ROUTINE

DAYS	1st period	2nd period	3rd period	4th period	5th period	6th period	7th period
Monday							
Tuesday							
Wednesday							
Thursday							
Friday							
Saturday							
Sunday							

CHANDAMAMA A monthly magazine for children
where the old become younger and the young grow older.

CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School
CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School
CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School
CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School

प्रत्येक पृष्ठ भारतीय संस्कृति की भव्यता से ओतप्रोत हैं।

विश्व विख्यात महा काव्यों, प्रेरणादायक दंत कथाओं, ऐतिहासिक इतिवृत्तों, सम-सामयिक जीवनियों, धर्म तथा पुराणों में हमारी संस्कृति प्रतिबिंबित है। हमारी प्राचीन परंपराओं, अचार-विचारों और विश्वासों से पूर्ण हमारे संस्कृतिक वैभव से वर्तमान पीढी को उपेक्षित रखा नहीं जा सकता।

प्रत्येक भारतीय परिवार मे बच्चों को महान मनीषियों तथा वीरों के शौर्य, पराक्रम, धर्म व न्यायप्रियता की कहानियाँ सुनाई जाती हैं जिससे युवा पीढ़ी के मन में सरलतापूर्वक समग्र रूप में विचक्षणशीलता का बीजारोपण कर सके।
ये कहानियाँ साधारणतया मौखिक रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी जो चली आ रही थीं, उन्हें बड़े प्रयास के साथ बच्चों के वास्ते लिपि बद्ध करके पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराया नहीं गया है।
चन्दामामा १९४७ में इस अभाव की पूर्ति करने के आशय से स्थापित हुआ जिससे इन पीढ़ियों के बीच की दूरी को पाट सके। यही आज एक मात्र ऐसा प्रमुख पत्र है जिसने भारतीय बच्चों के भीतर हमारी सांस्कृति के जागरण का शंखनाद किया है।
चन्दामामा ने अत्यंत विशिष्ट शैली में रोचक पाठनीय सामग्री के द्वारा भारत के बाहर के लोगों के वास्ते भी कथा-कथन का सूत्रपात किया है। यह भी ध्यान देने की बात है कि चन्दामामा ने अब तक

४३१० कहानियाँ, १३३ पद्य-कथायें, तथा १२० धारावाही जो महाकाव्यों, पुराणों, लोक कथाओं, अद्भुत कथाओं, जीवनियों तथा इतिहास के रूप में हैं, प्रकाशित की हैं।
अंग्रेजी को भी मिला कर तेरह भाषाओं में छपनेवाला अपने ढंग का एक मात्र लोकप्रिय पत्र चन्दामामा।

चन्दामामा की लोकप्रियता का एक मात्र प्रमाण प्रति मास इसके पढ़नेवाले १२,०००,००० बच्चे हैं।

चन्दामामा की प्रचारित संख्या लगभग ८००,००० है जो प्रति मास भारत तथा पूर्वी एशिया के परिवारों, पाठशालाओं तथा पुस्तकालयों में पहुंचता है।

चिंताग्रस्त

कई शताब्दियों के पहले साकेत राज्य पर एक राजा राज्य करते थे। उनके चार पुत्र थे, फिर कई साल बाद उन्हें जब एक और पुत्र पैदा हुआ, तब उन्होंने अपनी छोटी रानी से कोई वर माँगने को कहा। छोटी रानी ने अपने पुत्र को राजगद्दी माँगी। इस पर बड़े चार राजकुमार साकेत को छोड़ कहीं चले गये।

वे राजकुमार अपने परिवारों के साथ हिमालय पर्वतों की तराई में पहुँचे। वहाँ पर किसी नगर पर अधिकार करके उस पर शासन करना चाहा, मगर एक मुनि ने उन्हें सलाह दी कि वे एक नये नगर का निर्माण करें। राजकुमारों ने मुनि की कुटी के समीप में ही अपने निवास बनाये।

उस मुनि का नाम कपिल था, इस कारण उस नगर का नाम कपिलवस्तु पड़ा। उस प्रदेश में शाक (टीक) वृक्ष ज्यादा थे, इस कारण वे शाक्य कहलाये। कई पीढ़ियों के गुजरने के बाद शुद्धोदन उस वंश का राजा बने। एक दिन रात को उनकी रानी मायादेवी ने सपना देखा कि उनके शरीर में एक सफ़ेद हाथी प्रवेश कर गया है।

ज्योतिषियों ने उस सपने का अर्थ बताया कि रानी के गर्भ में एक महात्मा प्रवेश कर गये हैं। इसके बाद रानी अपने मायके के लिए रवाना हो गईं। रास्ते में लुंबिनी वन में रानी विश्राम करते साल वृक्ष की एक शाखा पकड़े हुए थी, तभी उन्हें प्रसव-पीड़ा शुरू हुई।

रानी का प्रसव लुंबिनी वन में ही हो गया। इसके बाद माँ और बेटे कपिलवस्तु को लौट आये। राजा ने परमानंदित होकर उत्सव मनाने का आदेश दिया। लेकिन उन उत्सवों के बीच रानी अपने सात दिन के पुत्र को मातृहीन बनाकर स्वर्ग सिधारीं।
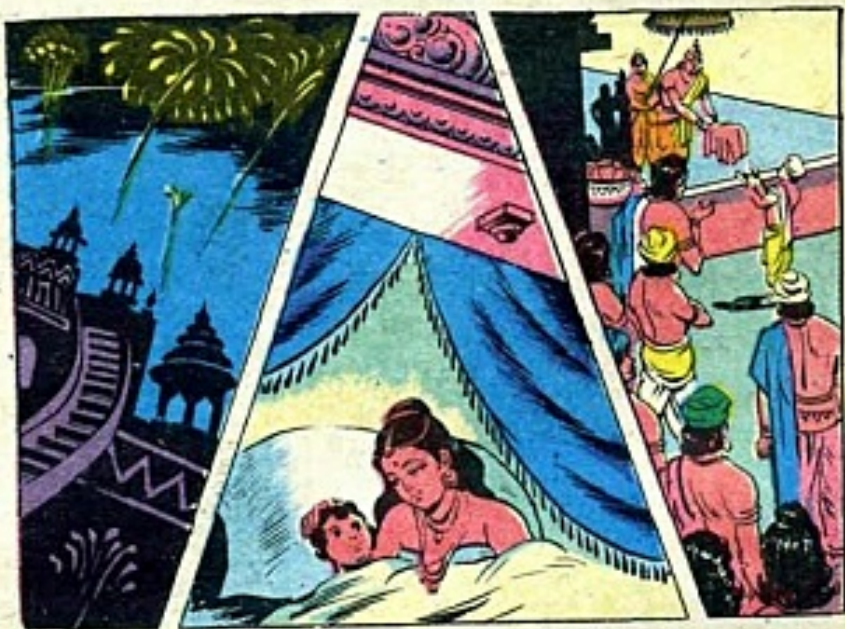
राजकुमार का नामकरण सिद्धार्थ किया गया। इसका अर्थ–जो अपने आशय की सिद्धि प्राप्त कर चुका हो–होता है। राजकुमार एक दिन उद्यान में बैठे हुए थे, तब बाण से घायल एक पक्षी आकर उनकी गोद में गिरा। सिद्धार्थ ने पक्षी के शरीर से बाण निकालकर उसकी रक्षा की। इतने में उनका ज्ञाति देवदत्त वहाँ पर आ पहुँचा।

देवदत्त ने सिद्धार्थ से पूछा–"मैंने इस पक्षी को गिराया है, इसलिए मुझे दे दो।" पर सिद्धार्थ ने वह पक्षी नहीं दिया। दोनों राजसभा में पहुँचे। सिद्धार्थ ने वहाँ पर पूछा–"मुझे यह बताइये कि कोई भी प्राणी उसे मारनेवाले का होता है या बचानेवाले का?" मंत्रियों ने सिद्धार्थ के अनुकूल निर्णय दिया।

एक दिन खेतों की जुताई का उत्सव मनाया जा रहा था। राजकुमार भी वह उत्सव देखने गये। एक खेत में कुछ किसान एक साँप को पकड़कर मारने जा रहे थे। इस पर सिद्धार्थ ने समझ लिया कि इस संसार में मानव का अस्तित्व हिंसा से भरा हुआ है। फिर क्या था, उनका मन चिंता से भर उठा।

उस दिन से सिद्धार्थ हमेशा संसार की गति-विधि के बारे में सोचने लगे। वे इन्हीं बातों के बारे में ज्यादा विचारने लगे–"क्या मानव को सदा संघर्ष और हिंसा का शिकार बनना होगा? मानव को सुख क्या संतुष्टि दे सकते हैं? मानव जीवन का क्या और कोई लक्ष्य नहीं है?

ज्योतिषियों ने बताया कि राजकुमार राजमहल से बाहर न निकले तो चक्रवर्ती बन जायेंगे, वरना वे बुद्धत्व को प्राप्त होंगे। राजा ने राजकुमार के वास्ते तीन महल बनवाये—एक ग्रीष्म ऋतु के लिए संगमरमर का, दूसरा जाड़े के दिनों के लिए लकड़ी का, तीसरा बरसात के लिए एक महल। उनमें समस्त प्रकार की सुविधाओं का इंतजाम किया गया।

सुप्रबुद्ध की पुत्री यशोधरा बड़ी रूपवती है। उसके पिता ने उसके स्वयंवर का प्रबंध किया। राजा शुद्धोदन ने उस स्वयंवर में सिद्धार्थ को भेजा। स्वयंवर की स्पर्धा में कई क्षत्रिय कुमारों ने भाग लिया। सभी स्पर्धाओं में सिद्धार्थ ही विजयी हुए।
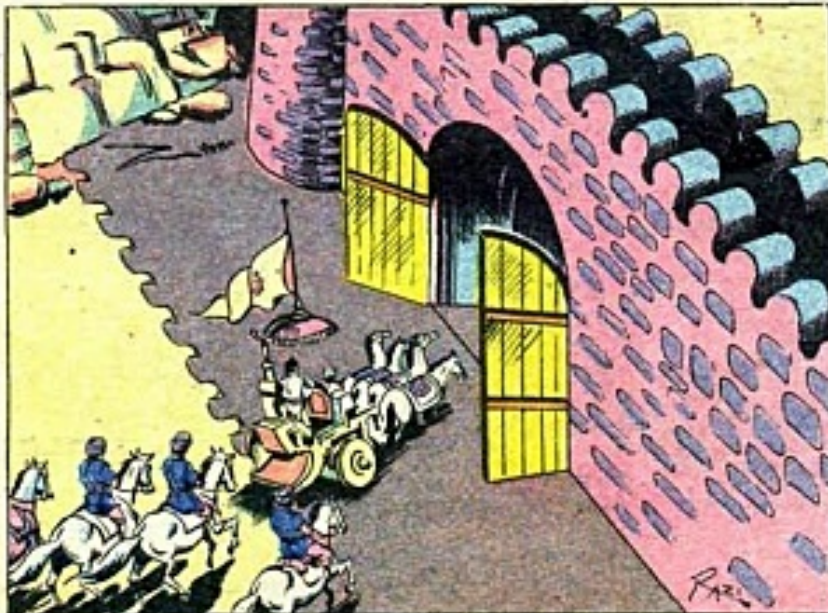
यशोधरा ने सिद्धार्थ के कंठ में वरमाला पहना दी। उनका विवाह हुआ। सिद्धार्थ अपनी पत्नी को लेकर अपने नगर को लौट आये। कपिलवस्तु में वैभवपूर्वक उत्सव मनाये गये। शुद्धोदन यह सोचकर निश्चित हो गये कि अब उनका पुत्र महल छोड़कर बाहर नहीं जायेंगे।

बेकार की चीज़ें

मणिपुर में रामगुप्त नारियल के तेल का व्यापार किया करता था। कोल्हू चलाने के लिए खोपरे की ज़रूरत है, मगर वह पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलता था। इसलिए रामगुप्त पक्के नारियल मँगवाता, उनमें से गरी निकलवाकर सुखा देता, नारियल के खोपड़े फेंक देता।

एक बार रामगुप्त के घर जनार्दन नामक एक युवक आया। उसने रामगुप्त के मकान के अहाते में ढेरों पड़े नारियल के खोपड़ों को दिखाकर पूछा—"आप इन्हें क्या करनेवाले हैं?"

"जलावन के काम में लाते हैं। इससे बढ़कर उनकी उपयोगिता ही क्या है?" रामगुप्त ने जवाब दिया।

"आप बड़े आकार के खोपड़े मुझे बेच दे तो मैं खरीदने के लिए तैयार हूँ।" जनादन ने कहा।

रामगुप्त ने सोचा कि जाड़े में पानी गरम करने के काम को छोड़ ये खोपड़े और किस काम के हो सकते हैं? फिर उसने मान लिया। जहाँ तक हो सके बड़े आकार के खोपड़ों को चुनकर दो बोरों में लदवाया। उनका दाम देकर जनार्दन ले गया।

इसके बाद रामगुप्त जब भी नारियल फोड़वाते तो हर नारियल के दो बराबर के खोपड़े निकलने लायक़ फोड़वा देते। जनार्दन पंद्रह दिन में एक बार आकर खोपड़े खरीदकर ले जाता। इस तरह एक साल बीत गया। इसके बाद जनार्दन ने नारियल के खोपड़े खरीदना बंद कर दिया।

दो महीने बीत गये।

आखिर रामगुप्त को खबर मिली कि जनार्दन लक्ष्मणपुरी नामक गाँव में रहता

लक्ष्मण प्रसाद

है। वह गाँव मणिपुर से पच्चीस मील की दूरी पर है। एक बार रामगुप्त किसी काम से शहर में गया तो लौटती बार जान-बूझकर लक्ष्मणपुरी से होकर आया। उसने लक्ष्मणपुरी पहुँचकर जनार्दन के बारे में पूछताछ की तो बड़ी आसानी से उसके घर का पता लग गया।

रामगुप्त थोड़े से नारियल के बगीचे पार करके एक आम के बगीचे में स्थित एक विशाल मकान में पहुँचा। वह देखने में संपन्न व्यक्तियों के मकान जैसा लगा। रामगुप्त ने सोचा कि जनार्दन उस मकान के मालिक के यहाँ शायद काम करता होगा। रामगुप्त ने उस मकान की ड्योढ़ी के पास काम करनेवाले एक आदमी से पूछा—"सुनो भाई, यहाँ पर जनार्दन है?"

उस आदमी ने रामगुप्त की ओर आपाद मस्तक एकटक देखा, तब अन्दर जाने का रास्ता दिखाया। वह मकान जमीन्दारों के महल जैसा था। महल की छत पर कुछ लोगों के साथ बातचीत करनेवाला व्यक्ति जनार्दन जैसा ही लगा। वह बड़ी क़ीमती पोशाकें पहने हुए था। उसने ऊपर से ही रामगुप्त को देखा, उन्हें मकान के भीतर बुला लाने को एक आदमी को भेजा और वह खुद सीढ़ियाँ उतरकर नीचे आ गया।

नीचे हाल में दोनों मिले। जनार्दन का ठाठ और शान देख रामगुप्त अचरज में आ गया।

"रामगुप्तजी! मेरे मकान और यह सारा हाल देख आप को आश्चर्य मालूम होता है न? आप यह सोच रहे हैं न कि नारियल के खोपड़े ख़रीद ले जानेवाले को ये रेशमी वस्त्र और महल कैसे प्राप्त हो गये? आप पहले मेरा आतिथ्य स्वीकार कर लीजिए। बाद को सारी बातों पर विचार करेंगे।" जनार्दन ने समझाया।

बढ़िया दावत खाने के बाद बैठक में आराम करते वक़्त जनार्दन ने रामगुप्त को अपनी कहानी यों सुनाई:

एक जमाने में हम जमीन्दार परिवार के थे। हमारे बाप-दादाओं ने आगे-पीछे सोचे बगैर दान-धर्म किये, आखिर कंगाल हो गये। जब मैंने होश संभाला, तब न मेरे वे बाप-दादा थे और न वह जायदाद व वैभव!

यहां से समीप में मायावती नामक नगर है। उसके जमीन्दार सुंदरसिंह एक बार अपनी गाड़ी में कहीं जा रहे थे। रास्ते में उनकी गाड़ी उलट गई। वक़्त पर मैं उधर से आ निकला। मैंने और कोचवान ने मिलकर गाड़ी को ठीक से खड़ा किया। इसके बाद मैंने जमीन्दार साहब को उनके घर पहुँचा दिया।

बातचीत के दौरान उन्होंने मेरी हालत सुनी और वे बहुत दुखी हुए।

मैंने गंभीर होकर उन्हें समझाया–"आप क्यों चिंता करते हैं? कभी कभी बेकार की चीज़ों की मदद से हम संपन्न व्यक्ति बन सकते हैं।"

सुंदरसिंह ने हँसकर कहा–"जनार्दन, तुम्हारे कथनानुसार अगर बेकार की चीज़ों के साथ तुम धन कमा सकते हो तो मैं अपनी इकलौती बेटी के साथ तुम्हारा विवाह करूँगा। चाहे तो मूल धन के रूप में तुम मुझ से थोड़ा धन ले लो।"

इसके बाद मैंने सुंदरसिंह से थोड़े रुपये उधार में लिये। खिलौनों तथा मिट्टी के बर्तनों पर रंग भरनेवाले दो आदमियों तथा दो कुशल बढ़इयों को ठीक किया। नारियल के खोपड़े इकट्ठा कर उनके साथ तरह-तरह के खिलौने, गुड़िया और कलछियाँ बढइयों से तैयार करवाया। खिलौनों में रंग भरवा दिया। रंग-बिरंगे खिलौने खुद हिलते-सर हिलाते देख अत्यंत आकर्षक लगते थे, इस कारण शहर में वे सब अच्छे दाम पर बिक गये।

उसी वक़्त नारियल की टहनियों को मँगवाकर औरतों के द्वारा उनकी तीलियाँ निकलवाईं और झाड़ू तैयार कराये। मेरे

खिलौनों, झाड़ुओं तथा नारियलों की मध्य देश में बड़ी अच्छी मांग थी। इसी तरह वहाँ पर जो चीजें सस्ते में मिलती थीं, उन्हें मँगवाकर यहाँ पर अच्छे मूल्य पर बेच देता था। इस तरह व्यापार करके साल भर में मैंने काफी धन कमाया।

प्रारंभ में मुझे कच्चा माल आप के यहाँ से प्राप्त हुआ। आप नारियल के तेल का व्यापार करते हैं न? काफी धन जमा होने के बाद मैंने लक्ष्मणपुरी को अपना स्थिर निवास बना लिया। क्योंकि यहाँ पर नारियल के बगीचे बहुत ज़्यादे हैं।

सुंदरसिंहजी मेरे इस कार्य पर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने एक दिन मुझ से कहा–"सिर्फ़ नारियल के खोपड़ों व टहनियों के साथ व्यापार करके आप ने इतना धन कमाया है तो मुझे सचमुच आश्चर्य होता है। सब कोई तुम्हारे ही जैसे कर्मठ बनकर प्रयत्न करें तो ऐसा कोई काम न होगा जो नामुमकिन हो।"

यों कहकर अपने वचन के अनुसार उन्होंने अपनी पुत्री रुक्मिणी के साथ मेरा विवाह किया।

मैं सुंदरसिंह की जमीन्दारी के सारे मामले देखते हुए इस लक्ष्मणपुरी में उन्हीं के महल में रहता हूँ। मगर वे तो मायावती नगर में ही रह रहे हैं। यही मेरी कहानी है।"

रामगुप्त जनार्दन की कहानी सुनकर बड़ा खुश हुआ और बोला–"जनार्दनजी, आप ने युवकों को एक अच्छा रास्ता दिखाया है। आप के जैसे प्रत्येक व्यक्ति कोई न कोई योजना बनाकर आगे बढ़े तो लोगों के सुधरने के कई रास्ते खुल सकते हैं।"

इसके बाद जनार्दन के द्वारा चलाये जानेवाले सभी लघु उद्योगों को रामगुप्त ने खुद देखा। अपने सुधार के साथ और अनेक लोगों को जीविका दिखानेवाले जनार्दन का उसने अभिनंदन किया, तब वह अपने घर की ओर चल पड़ा।

सदाचारी

लक्ष्मीपति एक दिन शाम को सैर करने नहर के किनारे गया। अंधेरे के फैलते ही घर लौट रहा था, आम के बगीचे के बीच पहुँचते ही दो चोरों ने उस पर हमला किया। उनके हाथों में तलवारें थीं। एक ने लक्ष्मीपति के हाथ मरोड़कर पकड़ लिया, दूसरे ने लक्ष्मीपति के रुपये और अंगूठी हड़प ली। तब तलवार की नोक लक्ष्मीपति के गले पर टिकाया।

इससे डरकर लक्ष्मीपति चिल्ला उठा– "बचाओ, मुझे बचाओ।"

दूसरे ही क्षण "अबे, तुम लोग कौन हो?" यों कहते एक युवक दौड़ा-दौड़ा आया और उन पर टूट पड़ा। चोरों ने उस युवक पर हमला किया, मगर उसके सामने टिक न पाये और भाग खड़े हुए।

अधमरे लक्ष्मीपति उस युवक को हाथ जोड़कर बोला–"बेटा, तुम वक़्त पर भगवान की तरह आ पहुँचे, मेरी रक्षा की, मैं ज़िंदगी भर तुम्हारा यह उपकार भूल नहीं सकता। मेहर्बानी करके मुझे मेरे घर पहुँचा दो।"

"आप यह क्या कर रहे हैं? आप तो बुज़ुर्ग हैं। मुझे प्रणाम नहीं करना चाहिए। खतरे के वक़्त जो दूसरों की रक्षा नहीं करता, वह आदमी नहीं होता। चलो, हम आप के घर चले जायँ!" इन शब्दों के साथ उस युवक ने हाथ का सहारा देकर लक्ष्मीपति को उठाया।

रास्ते में लक्ष्मीपति ने उस युवक के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी हासिल की। उस युवक का नाम धर्मनंदन है। वह जब बच्चा था, तभी उसके माँ-बाप मर गये हैं। गाँववालों की मदद से वह पढ़-लिख पाया और नौकरी की खोज में उस गाँव में आया है, लेकिन अभी तक

शिवचरण वर्मा

उसके ठहरने आदि का कुछ इंतज़ाम न हो पाया है।

घर पहुँचते ही लक्ष्मीपति ने अपनी पुत्री को सारा समाचार सुनाया, तब बोला–"यह धर्मनंदन अगर वक़्त पर न आया होता तो अब तक मेरी लाश ही घर पहुँच गई होती।"

लक्ष्मीपति की बेटी कल्याणी आँखों में आँसू भरकर बोली–"आप को मैंने कई बार बताया कि अकेले अंधेरे के फैलने के बाद न घूमे, पर आप मेरी बात नहीं मानते; मेरी क़िस्मत अच्छी थी, इसलिए आज ये वक़्त पर वहाँ पर पहुँचे।" यों समझाने के बाद उसने धर्मनंदन के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। "अब मुझे आज्ञा दीजिए!" धर्मनंदन बोला।

"अरे, यह तुम क्या कहते हो? इस अंधेरे में तुम अपना बसेरा कहाँ ढूँढ़ लोगे? तुम तो हमारे मेहमान हो!" लक्ष्मीपति ने कहा।

कल्याणी ने तुरंत धर्मनंदन के वास्ते एक कमरा साफ़ कर दिया।

खाना खाते समय लक्ष्मीपति धर्मनंदन से बोला–"बेटा, मेरे पास लाखों रुपयों की संपत्ति है। मगर जब तक मैं अपनी बेटी को एक सदाचारी के हाथ न सौंप दूँ, तब तक मुझे शांति न मिलेगी।"

दूसरे दिन सवेरे धर्मनंदन ने लक्ष्मीपति से कहा–"महानुभाव, अब मैं यहाँ से चलकर कहीं नौकरी की खोज करूँगा।"

"और खोजना क्या? समझ लो कि तुम को नौकरी मिल गई है। इस गाँव में मेरी कपड़ों की चार दूकाने हैं। उनमें से एक की देखभाल करने का काम मैं तुम्हें सौंप देता हूँ।" लक्ष्मीपति ने कहा।

धर्मनंदन ने अनिच्छा से ही मान लिया। कल्याणी ने सोचा कि पिताजी ने अच्छा काम किया है, लेकिन जल्द ही धर्मनंदन के प्रति कल्याणी की सदिच्छा जाती रही। वह कल्याणी के पिता के रहते कल्याणी के साथ एक तरह का व्यवहार करता और उनकी गैर हाज़िरी

में दूसरे प्रकार का। जब-तब वह कल्याणी को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए कुछ विकृत चेष्टाएँ किया करता था।

एक बार कल्याणी ने अपने पिता को समझाया—"पिताजी, आखिर धर्मनंदन कितने दिन हमारे घर में रहेगा। उसके वास्ते कोई मकान ठीक क्यों नहीं करते?"

"यह भी सही है! वह पराये व्यक्ति के रूप में हमारे घर में कितने दिन रह सकता है! वह तो सदाचारी है। तुम्हारे साथ शादी करने की इच्छा रखता है। हमारी इच्छा के अनुसार वह घर जमाई दामाद बन सकता है। तुम्हारा क्या विचार है?" लक्ष्मीपति ने पूछा।

यह बात सुनकर कल्याणी आश्चर्य में आ गई। उसकी राय जाने बिना धर्मनंदन ने शादी के बारे में कल्याणी के पिता से चर्चा की; यह बात कल्याणी को अपमान जनक मालूम हुई। वह अपनी एक सखी के भाई राजेश के साथ प्यार करती थी, मगर कल्याणी ने कभी यह बात अपने पिता को नहीं बताई। राजेश उसकी जाति का नहीं था।

कल्याणी ने अपने पिता से पूछा—"आप ने यह कैसे निर्णय किया कि वह सदाचारी है?"

लक्ष्मीपति गुस्से में आकर बोला—"मैं मनुष्यों की प्रकृति जानता हूँ। अगले

महीने में धर्मनंदन के साथ तुम्हारी शादी होगी। यह बात निश्चत है।"

वह अपने पिता के सामने कुछ बोल न पाई, तेजी से बाहर आ गई। तब उसने भांप लिया कि धर्मनंदन आड़ में रहकर उनका वार्तालाप सुन रहा था, कल्याणी को देखते ही अपने कमरे में चला गया।

उस रात को कल्याणी सो नहीं पाई। उसने अपने कर्तव्य के बारे में राजेश के साथ चर्चा करने का निश्चय किया।

उसी समय अचानक धर्मनंदन के कमरे में से भयंकर रूप से चीखने की आवाज़ हुई। कल्याणी जाग रही थी, वह झट से उठकर धर्मनंदन के कमरे में दौड़ गई।

धर्मनंदन खाट पर सिकुड़कर बैठा हुआ था। खाट के दूसरे छोर पर एक सफ़ेद बिलाव। कल्याणी को देखते ही वह बोल उठा–" उस बिल्ली को भगा दो।"

" वह कुछ न करेगी। वह तो पालतू बिल्ली है।" यों कहते कल्याणी ने उसे अपने हाथों में ले लिया।

" मैं बिल्ली से घृणा करता हूँ। इसका मतलब उससे डरने का नहीं।" धर्मनंदन अपने कथन का समर्थन करने लगा।

कल्याणी को उसकी बातों पर यक़ीन न हुआ। वह बिल्ली को लेकर चली गई।

दूसरे दिन कल्याणी ने राजेश को सारा बृत्तांत सुनाया और कहा–" धर्मनंदन ने मेरे पिताजी को अपने जाल में फंसा रखा है। जो व्यक्ति बिलाव को देख कांप उठता है, वह हत्यारों से मेरे पिताजी की रक्षा कैसे कर सकता है?"

" मैं उसके रहस्य का पता लगाऊँगा। लेकिन पहले हमें एक बात साबित कर लेनी है।" इन शब्दों के साथ राजेश ने कल्याणी को एक उपाय बताया।

दूसरे दिन शाम को कल्याणी धर्मनंदन से बोली–" मैं पहाड़ पर स्थित कामाक्षी मंदिर में जाना चाहती हूँ। क्या तुम भी साथ दोगे?"

धर्मनंदन बड़ी खुशी से उसके पीछे चल पड़ा। जब वे देवी के दर्शन कर पहाड़ पर से उतर रहे थे, तब अंधेरा फैल रहा था। पूर्व योजना के अनुसार राजेश एक पेड़ की आड़ में से झट आगे आया और कल्याणी के कंठ का हार तोड़ डाला।

कल्याणी चिल्ला उठी–" चोर को पकड़ लो। यह तो दस हजार मूल्य का क़ीमती हार है।" लेकिन राजेश ने भागने का कोई प्रयत्न नहीं किया, वहीं पर खड़े हो ताल ठोंकते हुए उसने धर्मनंदन को धमकी दी–" क्यों बे, मुझे पकड़ोगे? आओ! तुम्हारा गला घोंटकर पहाड़ के नीचे तुम्हारी लाश को फेंक दूंगा।"

धर्मनंदन यह धमकी पाकर भी अपनी जगह से हिला नहीं, बल्कि आपाद मस्तक कांप रहा था। किसी को उधर आते देख राजेश पेड़ों की ओट में चला गया।

"सोने का हार चला गया तो कोई बात नहीं, प्राण तो बच गये। चलो, चले।" कल्याणी बोली।

दूसरे दिन जब कल्याणी राजेश के घर पहुँची, तब वह बोला–"अब पूर्ण रूप से यह साबित हो गया है कि धर्मनंदन एक दम कायर है। उसने किराये के चोरों के द्वारा नाटक रचकर तुम्हारे घर मे प्रवेश किया, तुम्हारे साथ शादी करके तुम्हारी सारी संपत्ति का वारिस बनने का षड़यंत्र रचा है। मैं उसका यह खेल बंद करूँगा। तुम एक काम करो।" इन शब्दों के साथ राजेश ने कल्याणी को एक उपाय बताया।

दूसरे दिन शाम को राजेश ने लक्ष्मीपति से मिलकर कहा–"महाशय, मेरा नाम राजेश है, मैं आप के हित की कामना से एक बात आप को बताने आया हूँ, आप जिस धर्मनंदन को अपना दामाद बनाना चाहते हैं, उसका वास्तविक रूप जानना चाहे तो मेरे साथ चलिये।"

वैसे लक्ष्मीपति को उसके साथ चलने का इरादा न था, मगर उसे लगा कि राजेश की बातों के पीछे कोई भयंकर सत्य छिपा हुआ है, तब वह राजेश के पीछे चल पड़ा।

इधर अंधेरे के फैलते ही धर्मनंदन जब घर लौटा, तब कल्याणी ने उसे बताया–"तुम्हारी खोज में दो आदमी आये थे। कह रहे थे कि दोनों ने तुम्हारा बहुत बड़ा उपकार किया है। उसका फल उन्हें अभी तक पूर्ण रूप से नहीं मिला है। दोनों ने तुरंत तुम को उनसे मिलने को बताया है।" यों कल्याणी ने राजेश के घर का हुलिया बताया।

ये बातें सुनने पर धर्मनंदन के चेहरे का रंग बदल गया। वह उसी वक़्त राजेश के घर की ओर चल पड़ा।

राजेश मकान के अन्दर आगे के कमरे में दीप की बत्ती घटाकर लक्ष्मीपति से बोला–"जल्द ही धर्मनंदन यहाँ आएगा। आप उसकी बातें ध्यान से सुनिये।"

धर्मनंदन ने अंधेरे से भरे उस कमरे में दो व्यक्तियों की आकृतियाँ देख क्रोध में आकर कहा–"तुम लोगों का दिमाग तो खराब नहीं हो गया है? मेरा ससुराल बननेवाले मकान में क्यों आये? अगर उस बृद्ध ने तुम लोगों को पहचाना होता तो क्या होता? तुम दोनों ने मेरी जो मदद की, उसका दुगुना फल तुम्हें पहले ही मिल गया है। मैंने जो सौ रुपये दिये थे, उसके अलावा बूढ़े के रुपये और अंगूठी भी तुम लोगों ने ले ली है। क्या तुम्हारी आशा का कोई अंत नहीं है? मेरी शादी के होते ही बूढ़े के हाथ से मैं सारा अधिकार ले लूंगा, तब तक तुम लोग सब्र करो। इस बीच तुम लोग उधर आओगे तो हमें एक कौड़ी भी हाथ न लगेगी!" धर्मनंदन की धमकी के समाप्त होते ही राजेश ने बत्ती के प्रकाश को तेज किया। उस प्रकाश में लक्ष्मीपति और राजेश को देख धर्मनंदन का दिल बैठ गया।

उसी वक़्त कल्याणी ने कमरे के भीतर प्रवेश करके कहा–"पिताजी, देखा है न? आप ने इस दगेबाज को सदाचारी और स्वजाति का बताकर सर चढ़ा रखा है। इसके षड़यंत्र से अगर राजेश हमें न बचाता तो हमारी हालत कुत्तों से भी बुरी हो जाती।"

लक्ष्मीपति ने धर्मनंदन की ओर घृणा की दृष्टि दौड़ाकर डांटा–"अगर तुम इसी वक़्त मेरे सामने से हट न जाओगे तो मैं तुम्हें सिपाहियों के हाथ सौंप दूंगा।"

यों मौक़ा मिलते ही धर्मनंदन वहाँ से खिसक गया।

इसके बाद लक्ष्मीपति ने निश्चय कर लिया कि चाहे राजेश किसी जाति का क्यों न हो, सच्चा सदाचारी है; इसलिए कल्याणी का विवाह उसके साथ करना बिलकुल उचित होगा।

औरत की इच्छा

शारदा एक विधवा औरत है। वह बड़ी कंजूस और मकखीचूस भी। उसके बेटे हरनाथ की हाल ही में शादी हो गई है। इस रिश्ते को क़ायम करने में उसने अपने समधी से इतना दहेज़ वसूल किया कि क़रीब क़रीब उसके दिवाला निकलने की नौबत आई। हरनाथ के ससुर ने दीपावली के पर्व पर अपनी बेटी व दामाद को निमंत्रण भेजा।

अभी दो दिन में हरनाथ अपनी पत्नी के साथ अपने ससुराल में जानेवाला था, तब शारदा ने हरनाथ को अलग बुलाकर समझाया–"बेटा, तुम अपने ससुर से अंगूठी बनाकर देने की माँग करो। तुम तो नये दामाद हो! तुम्हारी इच्छा की जरूर पूर्ति करेंगे।"

हरनाथ अपनी माँ की बातों पर खीझकर बोला–"माँ, शादी में अपनी हैसियत से ज्यादा रुपये खर्च करके ससुर अब तक कर्जदार बन गये होंगे। ऐसी हालत में क्या उनसे सोने की अंगूठी माँगना वाजिब होगा?"

"बेटा, मैं तुम्हारे हाथ में एक अंगूठी देखना चाहती हूँ। माँ की इच्छा की पूर्ति बेटे को करनी है। पत्नी की इच्छा इसी प्रकार पति को पूरी करनी है।" माँ बोली।

हरनाथ ने मान लिया। वह दीपावली के समय अपनी पत्नी को साथ ले ससुराल में गया। त्योहार के बाद भी तीन-चार दिन वहाँ पर बिताकर पाँचवें दिन अपनी पत्नी को साथ ले घर लौटा।

अपने बेटे के हाथ की उंगली में सोने की क़ीमती अंगूठी देख शारदा खुशी से फूली न समाई। उसने अंगूठी की बड़ी तारीफ़ भी कर दी।

अर्चना द्विवेदी

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन शारदा ने हरनाथ से पूछा–"बेटा, मैंने अटारी पर संदूक़ में एक हज़ार रुपये छिपाकर रखा था। वे रुपये दिखाई नहीं देते। क्या तुमने तो नहीं लिये?"

शारदा ने हरनाथ को दहेज में प्राप्त धन में से थोड़ा हिस्सा अटारी पर छिपा रखा था, वह धन अब दिखाई नहीं देता था।

"हाँ, माँ! मैं अपने ससुराल जाते वक़्त एक हज़ार रुपये ले गया था। मैंने पहले ही बताया था न कि ससुर की बड़ी बुरी हालत है। तुम तो मेरी उंगली में अंगूठी देखना चाहती थी, मैंने जो कुछ सोचा था, वही हुआ। ससुरजी आर्थिक दृष्टि से बड़ी बुरी हालत में थे। इसलिए तुम्हारे मन की इच्छा की पूर्ति करने के लिए मैंने हमारे ही धन से अंगूठी बनवा ली।" हरनाथ ने समझाया।

शारदा ने चकित होकर पूछा–"अरे, मेरे रुपयों से अंगूठी बनाने को तुम्हारा मन कैसे हुआ?"

"माँ, तुमने ही पहले बताया था कि माँ की इच्छा की पूर्ति बच्चे को करनी है?" हरनाथ ने पूछा।

"अच्छा, ऐसा ही मान लेंगे। तुमने मेरी इच्छा की पूर्ति कर दी। उस अंगूठी को बेचकर वे रुपये मुझे ला दो।" शारदा बोली।

"माँ, तुम समझती हो कि अब तक वह अंगूठी मेरे पास है? तुम्हारी बहू ने रेशमी साड़ी पहनने की इच्छा प्रकट की, इस पर उस अंगूठी को बेच करके बढ़िया जरीदार रेशमी साड़ी ला दी।" हरनाथ ने समझाया।

"बेटा, तुमने यह क्या किया?" इन शब्दों के साथ शारदा सर पीटने को हुई।

"माँ, तुम्हीं ने तो बताया था कि पत्नी की इच्छा की पूर्ति पति को करनी है।" हरनाथ ने अपनी माँ से उल्टा सवाल किया।

इसका उत्तर क्या देना है, शारदा को बड़ी देर तक सोचने पर भी नहीं सूझा।
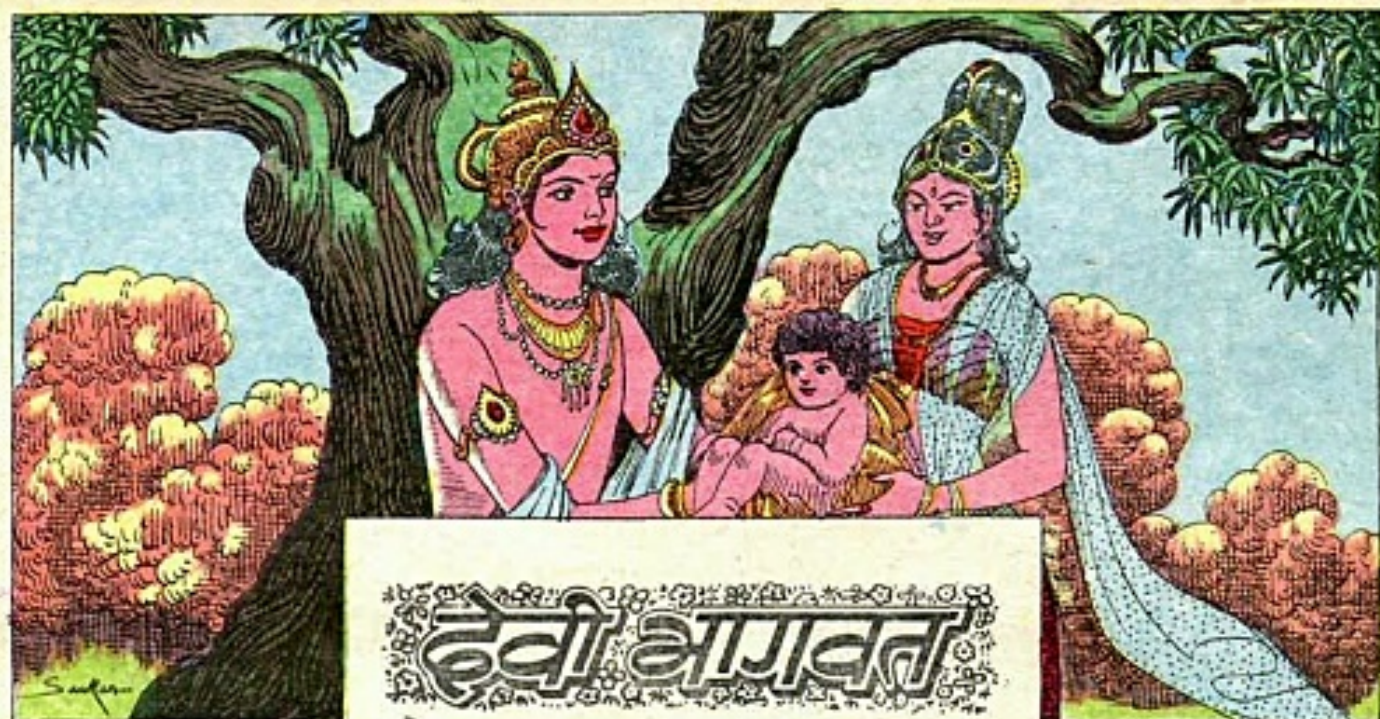
अपने पति के शाप के कारण घोड़ी बनकर लक्ष्मी ने अपने पति के द्वारा ही एक शिशु का जन्म दिया। शाप से मुक्त होकर पति के साथ वैकुंठ को जाते वक़्त उस शिशु को नदी तट पर के जंगल में छोड़ गई। इसके थोड़ी देर बाद चंपक नामक एक विद्याधर मदालसा नामक अपनी पत्नी के साथ विमान में उधर आ निकला। उस असाधारण तेजवाले शिशु को देख विमान से पृथ्वी पर उतर पड़ा और उस शिशु को प्यार से उठाकर मदालसा के हाथ सौंप दिया। मदालसा बहुत खुश हुई। उस शिशु को बार-बार चूमकर छाती से लगाया, फिर गोद में लेकर अपने पति से बोली—"यह शिशु कौन है? तुम्हें कैसे मिला? कोई इसे जन्म देकर फेंक गये होंगे।"

"हम इंद्र से इस शिशु का जन्म वृत्तांत जान लेंगे, अगर वे मान जायेंगे तो हम इसे पालेंगे।" यों कहते चंपक उसी वक़्त इन्द्र के पास चला गया।

विद्याधर ने इंद्र को उस शिशु को दिखाकर कहा—"मैं नहीं जानता कि यह शिशु कौन है? तमसा नदी के तट पर यह शिशु मुझे मिल गया है, कोई औरत इसे जन्म देकर फेंक गई हैं। यदि आप अनुमति दे तो मैं इसे अपने घर ले जाकर पाल लूंगा।"

इंद्र ने चंपक से कहा—"यह शिशु घोड़ों के रूप में स्थित लक्ष्मी-नारायण के द्वारा

२१. हैहय की कहानी

पैदा हुआ है। हैहय कहलानेवाले इस शिशु को विष्णु ने ययाति के पुत्र तुर्वस को पालतू शिशु के रूप में देने के लिए जन्म दिया है। इसलिए तुम इस बच्चे को तुरंत वहीं पर छोड़ दो। विष्णु की प्रेरणा पाकर तुर्वस शीघ्र ही उधर आ निकलेगा! इसका नाम एववीर पड़ जाएगा।"

यह उत्तर पाकर चंपक उस बच्चे को वहीं पर छोड़ आया, जहाँ उसे मिला था। तब अपने रास्ते चला गया।

इस बीच भगवान विष्णु ययाति के पुत्र/तुर्वास को दिखाई दिये। बड़े से बड़े पुण्यात्माओं के लिए भी दुर्लभ विष्णु के दर्शन पाकर तुर्वस बड़ा आनंदित हुआ और उसने भक्तिपूर्वक उस देव का स्तोत्र किया।

विष्णु ने उससे पूछा–"तुम्हारी कैसी इच्छा है?"

"मुझे एक पुत्र चाहिए।" तुर्वस ने जवाब दिया।

"तुम्हारे वास्ते मैंने लक्ष्मी के द्वारा एक पुत्र को जन्म दिया है। वह शिशु तमसा और कालिंदी नदियों के संगम पर है। तुम इसी वक़्त जाकर ले जाओ।" विष्णु ने कहा।

तुर्वस बड़ा प्रसन्न हुआ। विष्णु के बताये गये स्थान पर पहुँचा। वहाँ पर अपने पैर के अंगूठे को मुँह में रखकर खेलनेवाले शिशु को देख उसके सौंदर्य पर मुग्ध हो हाथ में उठाया, तब बोला– "बेटा, मैंने बड़ी कष्ट साध्य तपस्या की, तब जाकर विष्णु ने तुम्हें मुझे सौंप दिया है, तुम मेरे वंश की लता को आगे बढ़ाओ।" यों कहकर उसे ले अपने नगर को चला गया।

सारा राजमहल उत्सवों से सुशोभित हुआ। हरिवर्मा नाम से भी प्रसिद्ध उस तुर्वस ने उस शिशु को अपनी पत्नी के हाथ सौंपकर शिशु का सारा वृत्तांत उसे सुनाया। बच्चे का एकवीर नामकरण

किया गया। वह दिन ब दिन बढ़ता गया। छे महीने की अवस्था में अन्नप्राशन और तीन साल की उम्र में शिरोमुण्डन संस्कार आदि किये गये। ग्यारहवें वर्ष में उपनयन हुआ। इसके बाद उस बालक ने वेद और धनुर्वेद का अभ्यास किया।

युक्तवयस्क के होने पर एकवीर का तुर्वस ने वैभवपूर्वक राज्याभिषेक किया, तब अपनी पत्नी के साथ वानप्रस्थ में जाकर पार्वती के प्रति बड़ी तपस्या की। कालक्रम में पति-पत्नी स्वर्गवासी हुए। यह समाचार मिलते ही एकवीर ने अपने माता-पिता की अत्येष्ठि क्रियाएँ कीं, तब वह सुखपूर्वक राज्य करने लगा।

एक बार एकवीर अपने कुटुंब और परिवार समेत गंगा के तट पर पहुँचा। वहाँ पर उसने देखा कि ऋषियों के आश्रम सुंदर पेड़ों व पक्षियों के कलरव के साथ अत्यंत शोभायमान हैं। वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य का अवलोकन करते वह गंगा नदी के किनारे अकेले टहल रहा था, तब एक स्थान पर उसने एकाकिनी स्त्री को देखा। वह नदी में स्थित सौ पंखुडियोंवाले कमल के दक्षिण में थी। अत्यंत रूपवती वह नारी चिंतामग्न दिखाई दी।

उसे देख एकवीर ने पूछा—"आप क्यों चिंतित हैं? आप क्या मानवी हैं या देवता नारी हैं? आप का नाम क्या है? आप के दुख का कारण बता दे तो मैं उसे दूर करूँगा। चाहे आप के दुख का कारण मानव हो, दानव या देवता भी क्यों न हो?"

इस पर उस नारी ने उत्तर दिया—"किसी न किसी विपदा के बिना किसी को भी दुख क्यों प्राप्त होगा? एक देश का राजा रभ्यु था। वह बड़ा पुण्यात्मा था। उसकी पत्नी रुक्मरेखा थी। उसके कोई संतान न थी। उसने अपने पति से कहा—"जिस नारी के कोई संतान नहीं

हाथ सौंप दिया। वह भी इस तरह संतुष्ट हो गई, मानो उसने स्वयं एक पुत्र का जन्म दिया हो। वह बच्ची एक पुत्र जैसे ही उस महल में बढ़ती गई, मैं तो उस राजा रम्भु के मंत्री की पुत्री हूँ। मेरा नाम यशोवती है। हम दोनों लगभग एक ही उम्र की हैं। इसलिए राजा ने मुझे अपनी पुत्री की प्रिय सखी के रूप में नियुक्त किया है। हम दोनों बड़ी सख्यतापूर्वक खेला करती थीं। राजकुमारी को कमलों से बड़ा प्यार था। इसलिए वह रोज मुझे तथा अन्य सखियों को भी साथ ले गंगानदी में कमलों से भरे प्रदेश में जलक्रीडाएँ करने जाया करती थीं। मैं कई तरह से राजकुमारी को समझाती थी कि उतनी दूर जाना ठीक नहीं है, पर वह मेरी बात मानती न थी। इस पर मैंने उसकी इस आदत के बारे में उसके पिता को बताया। तब महाराजा रम्भु ने अपने ही नगर के अंदर कई कमलों से भरे तड़ाग बनवाये और अपनी पुत्री को समझाया—"बेटी, तुम्हें कमलोंवाले जल में क्रीड़ा करने की इच्छा हो तो इन तड़ागों में क्रीड़ा करो, लेकिन तुम महल से बाहर और जगह मत जाओ।"

मगर उसने दूर प्रदेशों में जाना बंद नहीं किया। इस पर राजा ने सशस्त्र

है, उसकी ज़िंदगी कितनी हीन होती है? अपनी पत्नी की ये बातें सुन राजा ने ब्राह्मणों को नियुक्तकर संतान के वास्ते यज्ञ किया। उस वक़्त अग्निकुंड से सोने की गुडिया जैसी एक लड़की पैदा हुई। यज्ञ करानेवाले होता ने राजा को वह लड़की दिखाकर कहा—"यह बच्ची एकावळी (एक पंक्तिवाला हार) जैसे अग्नि में से पैदा हुई है। इसका एकावळी नामकरण करके आज से अपने पुत्र जैसे पालन-पोषण करो। यही विष्णु के द्वारा तुम्हें प्राप्त प्रसाद है।"

राजा रम्भु बड़ा खुश हुआ। उसने उस बच्ची को अपनी पत्नी रुक्मरेखा के

सैनिकों के द्वारा राजकुजारी की रक्षा का प्रबंध किया। वह रोज अपने पिता की अनुमति ले मुझे तथा अन्य सखियों को साथ ले गंगा के किनारे आया करती थीं। एक दिन हम रोज की तरह सवेरे यहाँ पर आईं। हम से पहले ही रतीदेवी अप्सराओं को साथ ले यहाँ पर आईं और जलक्रीड़ाएँ कर रही थीं। मेरी सखी उनके साथ मिलकर जलक्रीड़ाएँ करने लगीं।

इतने में कालकेतु नामक राक्षस सदल-बल उधर आ पहुँचा, मेरी सखी एकावळी को देख उठा ले जाने के ख्याल से उसके समीप गया। इसे देख मैं चिल्ला उठी कि कोई राक्षस आ रहा है। तब मेरी सखी ने मुड़कर देखा, राक्षस से डरकर दौड़ती आईं और हम सखियों के बीच छिप गईं। इसके बाद कालकेतु राक्षस ने अपने गदे से हमारे सारे सशस्त्र सैनिकों को मार भगाया, मेरी सखी भय के मारे रोने लगीं। मैंने लाचार हो राक्षस से कई तरह से भिन्नत की–"मुझे ले जाओ, मेरी सखी को छोड़ दो।" उसने मेरी बातों पर ध्यान नहीं दिया, राजकुमारी को अपने साथ ले गया। मैं भी रोते उसके पीछे चली। मुझे देख एकावळी थोड़ी आश्वस्त हो गई। वह मेरे साथ आलिंगन करके रोने लगीं। इस पर कालकेतु ने अपने नगर को दिखाकर कहा–"मेरा नगर स्वर्ग से किसी भी हालत में कम नहीं है। तुम अपनी सखी को हिम्मत बंधवा दो।

इसके जवाब में मैंने उसे बताया– "तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करने की सामर्थ्य मेरे भीतर नहीं है। इसलिए तुम्हीं उसको मनवाने की कोशिश कर लो।" तब कालकेतु ने मेरी सखी से बिनती की–"मैं तुम्हारा दास हूँ। मुझ पर अनुग्रह करो। तुम्हारा यौवन शाश्वत नहीं है।"

"मेरे पिताजी एक राजकुमार के साथ मेरा विवाह करना चाहते हैं। मैंने हैहय नामक राजकुमार को वरण किया है। ऐसी हालत में मैं किसी और की पत्नी कैसे बन सकती हूँ? कन्याओं को अपने माता-पिता के द्वारा निर्णीत युवक के साथ विवाह करना है, वे तो स्वतंत्र नहीं होती हैं न?"

फिर भी वह दुष्ट राक्षस अपना हठ छोड़ने को तैयार न था। उसका नगर पाताल के गर्भ में राक्षसों की रक्षा में था। वहाँ पर कोई पहुँच सहीं सकता था।

यशोवती के मुँह से यह सारा वृत्तांत सुनकर एकवीर ने कहा–"राक्षस ने जब तुम को और तुम्हारी सखी को अपने नगर के एक मकान में रखा तो तुम यहाँ तक कैसे आ गईं? तुमने बताया कि तुम्हारी सखी ने हैहय के साथ प्यार किया है। लेकिन मुझे छोड़कर कोई दूसरा हैहय

मैं उसका दास बन जाऊँगा, तुम दोनों निश्चिंत रहो।" यों मुझे समझाकर मुझे भी एकावळी के साथ रथ पर बिठाकर शीघ्रतापूर्वक अपने नगर में पहुँचा। वहाँ पर एक सफ़ेद मकान में हमारे ठहरने का इंतजाम किया। उस मकान के चारों तरफ़ सशस्त्र राक्षस पहरा दे रहे थे।

राक्षस दूसरे दिन हमारे मकान में आया, मुझसे बोला–"तुम किसी भी तरह से अपनी सखी को मेरे साथ विवाह करने के लिए मनवा दो, उसे समझाओ कि वह मेरे राज्य की अधिकारिणी है। मैं उसका सेवक बना रहूँगा और उसकी हर इच्छा की जरूर पूर्ति किया करूँगा।"

नामक व्यक्ति नहीं है। क्या मेरे साथ विवाह करने के लिए ही तुम्हारे राजा ने उस कन्या का जन्म दिया है? बिना संकोच के साफ़ कह दो। तब मैं उस राक्षस का वध करके तुम्हारी सखी को ले आऊँगा। वहाँ तक जाने का रास्ता बतला दो। क्या राजा को कुछ पता है कि उसकी कन्या का राक्षस ने अपहरण किया है? मालूम होने पर क्या उसे बचाने का कोई प्रयत्न किये बिना चुप बैठा रहेगा? या वह बिलकुल असमर्थ है?"

इसके उत्तर में यशोवती यों बोली– "बचपन में एक सिद्ध ने मुझे एक मंत्र सिखाया है। जब मैं राक्षस के नगर में थी, तब मुझे वह मंत्र याद आया। मैंने इस ख्याल से उस मंत्र का जाप किया कि उस मंत्र के द्वारा देवी की आराधना करने पर मुक्ति मिल जाएगी। तब लाल वस्त्र धारण कर देवी ने सपने में मुझे दर्शन देकर कहा–"तुम अभी उठकर गंगा के तट पर जाओ, तुम्हें राक्षस से डरने की कोई जरूरत नहीं है। वहाँ पर मेरा भक्त हैहय आ जाएगा। वह तुम्हें देखने के बाद राक्षस का वध करेगा और एकावळी को मुक्त करायेगा। इसके बाद तुम उन दोनों का विवाह कर दो। यों कहकर वह अंतर्धान हो गई।"

"नींद से जागकर मैंने एकावळी को यह समाचार सुनाया। वह बहुत खुश हुई। मैं उस पराशक्ति की कृपा से यों चली आई हूँ।"

"लक्ष्मीदेवी मेरी माता हैं। मैं हैहय हूँ। मुझे एकवीर कहते हैं। तुम्हारी सखी के सौंदर्य का वर्णन सुनते ही उसके प्रति मेरे मन में मोह पैदा हुआ। जब तुमने कहा कि वह मेरे साथ प्रेम करती है, तभी मैं उसका दास हो गया हूँ। मैं तुम्हारा ऋण कैसे चुका सकता हूँ? मैं तुम्हारी सखी के पास कैसे पहुँच सकता हूँ?" एकवीर ने पूछा।

"राजन, मैं आप को एक मंत्र बताती हूँ। आप उसकी मदद से राक्षस नगर में जाइये। राक्षस कालकेतु का संहार करके राजकुमारी को ले आइये।" इन शब्दों के साथ यशोवती ने एकवीर को 'त्रिलोक तिलक' नामक मंत्र का उपदेश किया।

उस मंत्र की मदद से एकवीर यशोवती तथा अपनी सेना को भी साथ लेकर राक्षसपुर में पहुँचा। दूतों ने कालकेतु को सूचना दी कि एक भारी सेना आ रही है।

यह समाचार सुनते ही कालकेतु क्रोध के मारे पागल हो उठा। वह एकावळी के पास जाकर बोला–"सुनो, सेना के साथ आनेवाला व्यक्ति अगर तुम्हारा पिता है तो मैं आगे बढ़कर उनका स्वागत करूँगा। कोई दूसरा हुआ तो मैं तक्षण उसका वध कर डालूंगा। बताओ, वह कौन है?"

"मैं तो तुम्हारे यहाँ बन्दी हूँ। मुझे कैसे मालूम होगा कि कौन आ रहा है? निश्चयपूर्वक यह कह सकती हूँ कि आनेवालों में मेरे पिता या भाई नहीं हैं। चाहे कोई भी हो, मेरा संदेह है कि वह शक्तिशाली क्यों आ रहे हैं?" एकावळी ने उत्तर दिया।

इतने में दूतों ने आकर कालकेतु को युद्ध के लिए सन्नद्ध होने को कहा। कालकेतु रथ पर सवार हो चला गया। एकवीर घोड़े पर सवार हो कालकेतु के साथ जूझ पड़ा। भीकर युद्ध हुआ। जल्द ही कालकेतु एकवीर के हाथों में मर गया। उसकी सेनाएँ तितर-बितर हो गईं।

यशोवती ने जाकर एकावळी को यह ख़बर सुनाई। इसके बाद वे दोनों मिलकर एकवीर के शिविर में पहुँचीं, तब सब लोग एकावळी के पिता के नगर में गये। वहाँ पर एकवीर तथा एकावळी का वैभव के साथ विवाह हुआ। एकवीर ने अपनी पत्नी के साथ अपने नगर में जाकर सुखपूर्वक राज्य किया।

एकवीर का पुत्र कृतवीर्य है। कृतवीर्य का पुत्र कार्तवीर्य है–यों हैहय वंश का विकास हुआ।
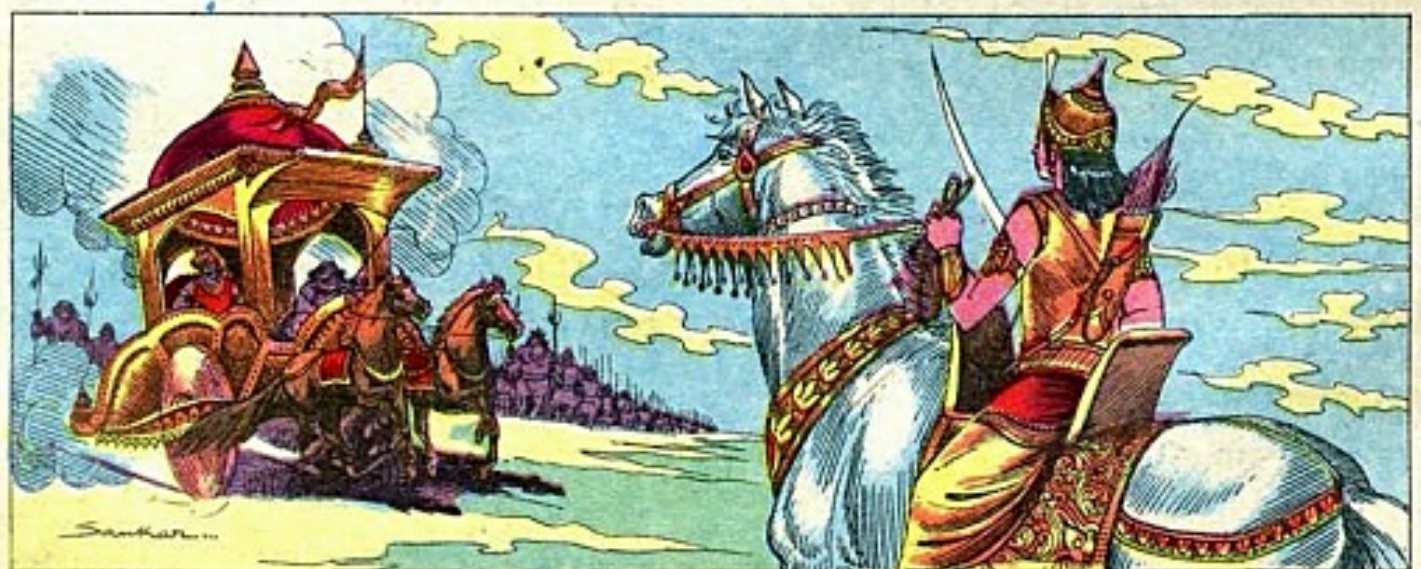
पुरुष द्वेषिणी

प्राचीन काल में विजय नामक राजा के रत्नावली नामक एक पुत्री थी। जब वह छोटी बालिका थी, तब उसकी धाई रोज एक कहानी सुनाती थी। एक कहानी यों है :

"किसी एक जंगल में जंगली कबूतरों का एक जोड़ा था। बहुत समय बाद उन्हें चार बच्चे हुए। एक बार जंगल में दावानल पैदा हुआ, बच्चे उड़ने की हालत में न थे, इसलिए उस आग में जल मरे। इसे देख मादा कबूतर बड़ी दुखी हुई। उसने सोचा—"मेरे बच्चों के मरने के बाद में ज़िदा क्यों रहूँ? मैं भी आग में कूदकर आत्महत्या कर लेती हूँ।"

"नर कबूतर भी आत्महत्या करने को चल पड़ा, मगर रास्ते में बोला—"हमें तो आत्महत्या नहीं करनी है। हम दोनों ज़िदा रहें तो हमें फिर से बच्चे पैदा हो सकते हैं। हम्हीं मर जायेंगे तो फिर बच्चों का कोई सवाल ही नहीं है?"

"छीः, तुम्हें तो अपने बच्चों की मौत का थोड़ा भी दुख नहीं है? मैं तुम्हारी बात नहीं मानूँगी।" यों कहकर मादा कबूतर अकेली चली गई और आग की लपटों में गिरकर मर गई। इसलिए दुनिया में सब पर यक़ीन किया जा सकता है, मगर मर्दों पर नहीं।"

यह कहानी सुनने पर राजकुमारी ने धाई से पूछा—"मृत मादा कबूतर का क्या हुआ?"

धाई ने हँसते हुए कहा—"वही कबूतर यों हमारे राजा के यहाँ राजकुमारी के रूप में पैदा हो गई।" यह कहकर उसने राजकुमारी को चूम लिया।

थोड़े दिन बाद वह धाई मर गई। पर राजकुमारी धाई की बताई मादा कबूतर

२५ वर्ष पुरानी चन्दामामा की कहानी

कुछ दिन बीत गये। दूर देश से एक राजकुमार और मंत्री पुत्र आये। रत्नावली की कुटी के चारों तरफ़ के बगीचे को देख वहाँ पर थोड़ी देर विश्राम करने के ख्याल से उसमें घुस पड़े।

उसी क्षण एक धाई यों चिल्लाते वहाँ पर आ पहुँची—"जाओ, यहाँ पर पुरुषों का प्रवेश निषिद्ध है। आप तो परदेशी मालूम होते हैं। यह तो हमारी राजकुमारी रत्नावली देवी की कुटी है। यहाँ पर अगर मर्द नामक कोई प्राणी आया तो हमारे राजा उसे कठोर दण्ड देंगे?"

"हम तुम्हारी रत्नावली को उठाकर थोड़े ही जायेंगे?" राजकुमार ने पूछा।

"हमारी राजकुमारी पुरुषों की छाया से भी द्वेष करती हैं, समझें! जल्दी यहाँ से चले जाइये!" धाई ने समझाया।

इस पर वे दोनों बगीचे से बाहर आये। तब राजकुमार बोला—"दोस्त! मेरी अंतरात्मा बताती है कि इस पुरुष द्वेषिणी के साथ शादी करनी ही होगी! इसके वास्ते उपाय क्या है?"

"शायद कहीं वह कुरूपिणी हो? मैं पता लगा देता हूँ।" मंत्री पुत्र ने कहा।

इसके बाद दोनों सीधे नगर में चले गये और एक भठियारिन के घर टिक गये। तब मंत्री पुत्र ने पूछा—"नानीजी,

की कहानी और पुरुषों पर विश्वास नहीं करना चाहिए, यह नीति भूल नहीं पाई।

राजकुमारी ने एक दिन अचानक अपने पिता से कहा—"पिताजी, मेरे वास्ते उद्यान में एक कुटी बनवाइयेगा। उसमें सिर्फ़ मैं और मेरी सखियाँ मात्र रहेंगी। ऐसा ज़बर्दस्त बन्दोबस्त कीजिएगा कि कोई पुरुष मात्र उधर से न निकले।"

"बेटी, यह तुम क्या कहती हो? मैं कल या परसों तुम्हारी शादी करना चाहता हूँ।" पिता ने कहा।

"पिताजी, इस जन्म में क्या, एक हजार जन्म लेने पर भी मेरा विवाह करना असंभव है।" राजकुमारी ने कहा।

सुना है कि आप के देश की राजकुमारी पुरुषों से द्वेष करती हैं। कहीं कुरूपिणी तो नहीं हैं?"

"नहीं, हमारी राजकुमारी रत्नावली बड़ी ही रूपवती है।" भठियारिन ने जवाब दिया।

"तब तो पुरुषों के साथ वह द्वेष क्यों करती हैं?" मंत्री-पुत्र ने पूछा।

"बेटा, यह बात एकदम रहस्य पूर्ण है! रत्नावली पिछले जन्म में मादा कबूतर थी। बहुत समय बाद उस कबूतर ने जब बच्चे दिये, तब अग्निदेव ने उन्हें भस्म किया। इस पर मादा कबूतर और नर कबूतर दोनों ने मिलकर आत्महत्या करनी चाही। मगर अंतिम क्षण में नर कबूतर कहीं बचकर भाग निकला; मादा कबूतर लपटों में गिरकर मर गई और हमारे राजा के घर पैदा हुई।" भठियारिन ने रहस्य खोल दिया।

"नानीजी! यह रहस्य कैसे खुल गया?" मंत्री पुत्र ने पूछा।

"बेटा, रत्नावली को अपने पूर्वजन्म का ज्ञान है।" नानी ने कहा।

"ओह, ऐसी बात है!" यों कहकर मंत्री पुत्र ने कोई उपाय सोचा।

दूसरे दिन सवेरे ही राजकुमार और मंत्री पुत्र भठियारिन से विदा लेकर चल

पड़े। वे नगर के बाहर पहुँचे, वहाँ पर अपने वेष बदलकर फिर लौट आये, तब राजा के दरबार में सीधे पहुँचे।

"तुम दोनों कौन हों? किस देश के निवासी हो?" राजा ने साधारण प्रश्न किये।

"महाराज! हम नेपाल के निवासी हैं। ये मेरे गुरु हैं। इन्द्रजाल विद्या में इस दुनियाँ में इनकी बराबरी कोई नहीं कर सकते! ये जलस्तंभन, वायुस्तंभन, अग्निस्तंभन आदि सभी विद्याओं का प्रदर्शन करेंगे। रेगिस्तान में ये जंगलों की सृष्टि करते हैं, सूखे ठूँठों पर फल पैदा करेंगे। आप इनकी विद्या पर खुश होकर

उचित पुरस्कार दीजिएगा।" मंत्री पुत्र ने कहा।

"अच्छी बात है! हम यह प्रदर्शन उद्यान में स्थित कुटी के पास करवायेंगे। मेरी पुत्री भी यह प्रदर्शन देख सकेगी।" राजा ने कहा।

मंत्री पुत्र घबराहट का अभिनय करते बोला—"महाराज, नहीं, नहीं, ऐसा न कीजिएगा! हमारे गुरु नारी द्वेषी हैं। वे औरतों को नहीं देखते, भले ही आप का पुरस्कार उन्हें न मिले। वे अपना व्रतभंग होने न देंगे।"

"ओह, ऐसी बात है! क्या नारियाँ कहीं गुप्त रूप में बैठकर यह प्रदर्शन देख सकती हैं?" राजा ने पूछा।

"नारियाँ उन्हें बिलकुल दिखाई न दें और उनका स्वर उन्हें सुनाई न पड़े, इन शर्तों पर हो सकता है।" मंत्री-पुत्र ने सुझाया।

इसी प्रकार प्रदर्शन का प्रबंध हुआ। बगीचे के अहाते में नारियों के वास्ते विशेष स्थान का प्रबंध किया गया और नारियों के सामने परदे लगाये गये।

इंद्रजाल प्रारंभ होने के पहले राजकुमार ने उठ खड़े होकर यों कहना शुरू किया:

"अगर मेरे प्रदर्शनों को नारियाँ ठीक से देख न पाये तो महाराजा मुझे क्षमा करेंगे। मैं नारियों से क्यों द्वेष करता हूँ, इसका कारण बताता हूँ! मुझे अपने पूर्व जन्म का ज्ञान है! मैं पिछले जन्म में एक जंगली कबूतर हूँ! मैं और मेरी पत्नी के बीच परस्पर अनुराग था। हमें बहुत समय बाद बच्चे हुए, तो उन्हें अग्निदेव ने आहुति ले ली। मैं और मेरी पत्नी ने आत्महत्या करनी चाही। लेकिन आखिरी क्षणों में मेरी पत्नी कहीं चली गई। मैं यह निर्णय करके कि किसी भी जन्म में नारियों पर विश्वास नहीं करना चाहिए, अग्नि में कूद पड़ा और अपने प्राण दे दिये। उस पुण्य के फल स्वरूप इस जन्म में इन्द्रजाल विद्या के साथ में पैदा हुआ।

जन्म-जन्मों तक मेरी पत्नी विवाह न कर सकेगी, उसे मैं यही शाप दे देता हूँ। मैं भी नारी के साथ द्वेष करता हूँ।"

ये बातें सुनकर राजकुमारी रत्नावली पर्दे को हटाकर आगे आई और बोली—"यह तो झूठ है! सफ़ेद झूठ है! संतान के शोक से मैं मर गई थी। तुम तो कहीं उड़कर चले गये।"

"मैं? मैं तो दूसरे ही क्षण आग की लपटों में गिर गया। तुमने ही मुझे धोखा दिया।" राजकुमार ने कहा।

"तुमने कहा था कि हम ज़िंदा रहें तो फिर बच्चे पैदा होंगे! तुम्हीं दगेबाज हो!" राजकुमारी गरजकर बोली।

"मैंने सिर्फ़ तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ये बातें कहीं, अगर भगवान को संतान देना ही था तो जो बच्चे हुए, उन्हें क्या अग्नि की आहुति दे देते? तुम्हीं धोखेबाज हो। मेरी ये बातें सुनते ही तुम दूसरी दिशा में भाग गई और अपनी जान बचा ली हो!" राजकुमार ने क्रोध का अभिनय करते कहा। इस पर मंत्री पुत्र ने समझाया—"गुरुदेव! जो होना था, सो हो गया। आप अपनी पत्नी को क्षमा करके उन्हें फिर से स्वीकार कर लीजिए! हम यही सोच रहे हैं कि आप दोनों को परमेश्वर ने ही फिर मे मिला दिया है।"

ये बातें सुन राजकुमार प्रसन्न हुआ, रत्नावली के समीप जाकर बोला—"अगर मैंने तुम्हारे प्रति अन्याय किया हो नो मुझे क्षमा कर दो। मैंने सोचा था कि तुम आग में कूद नहीं पड़ी!"

"मैं ही पापिनी हूँ! मैंने यही सोचा था कि मेरे मरने के बाद आप कहीं बचकर भाग गये हैं। आप ही मुझे क्षमा कर दीजिए!" रत्नावली ने कहा।

राजकुमार का इंद्रजाल सिर्फ़ यही था कि उसने रत्नावली के मन में स्थित पुरुष-द्वेष को दूर किया। इसके पुरस्कार के रूप में राजा ने एक शुभमुहूर्त में राजकुमारी के साथ उसका विवाह किया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां सितम्बर १९८० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Bhalchandra Kadne

★

N. S. Olaniya

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों ।

★ जुलाई १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा ।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा ।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसम न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मई के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **रुको जरा तस्में कस आऊँ ?!**

द्वितीय फोटो : **भैया को जूते पहनाऊँ !!**

प्रेषक : **श्रीमती संध्या दूबे,** ४५, कृष्णपुरा, देवास (म. प्र.) ४५५००२

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी ।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख़ से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

पिता का कर्ज अदा करना औलाद के लिए फर्ज बना—
बेटों ने इसे किस तरह निभाया!
देखिये...

बी. नागि रेड्डी की नई पारिवारिक फिल्म

स्वयंवर

दिग्दर्शन: पी. सांबशिव राव संवाद: राज बलदेव राज गीत: गुलजार संगीत: राजेश रोशन

A FILM BY VIJAYA PRODUCTIONS

एक पारिवारिक फिल्म आपके परिवार के लिए—

CHANDAMAMA (Hindi) JULY 1980 Regd. No. M. 5452

राम और श्याम

'असली निशाना'